संपर्क भाषा भारती

साहित्य-समाज को समर्पित राष्ट्रीय मासिकी, अगस्त —2022, RNI-50756

सहयोग 60/-

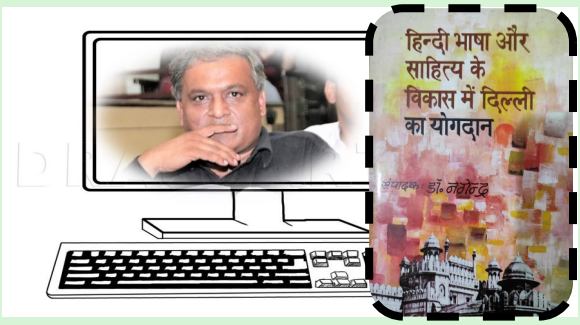

प्रिय समस्त पाठकगण,

कुछ दिनों पहले कुछ पुस्तकों को तलाशते-तलाशते एक पुस्तक दिखाई पड़ी। पुस्तक है हिन्दी के प्रसिद्ध समालोचक स्वर्गीय डॉ नगेंद्र द्वारा संपादित 'हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास में दिल्ली का योगदान'।

एकदम स्मरण हो आया कि इस पुस्तक के प्रकाशित होते ही उन्होंने एक प्रति "संपर्क भाषा भारती" को भी मानद भिजवाई थी।

जैसा कि पुस्तक के शीर्षक से ही स्पष्ट है, पुस्तक में उन व्यक्तियों और संस्थाओं का जिक्र है जिनका हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास योगदान रहा है। यह हर्ष का विषय है कि डॉक्टर साहब ने आप सब की प्रिय पत्रिका "संपर्क भाषा भारती" का भी उल्लेख दिल्ली से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिकाओं के क्रम में पृष्ठ 260 में किया है। जिसमें स्पष्ट उल्लेख है कि संपर्क भाषा भारती पत्रिका का प्रकाशन, वर्ष 1990 से जारी है और पत्रिका के संपादक के रूप में मेरे नाम का उल्लेख भी उस पृष्ठ पर हुआ है।

इस पुस्तक ने बीते दिनों के कई पन्ने खोल दिये। मुझे "संपर्क भाषा भारती" का प्रकाशन क्यों शुरू करना पड़ा? उसका भी स्मरण यह पुस्तक दिला गई।

हुआ यह कि मैं भोपाल से प्रकाशित 'शिखर वार्ता' राजनैतिक पत्रिका का दिल्ली ब्यूरो प्रमुख था। वर्तमान में कैरियर यूनिवर्सिटी, भोपाल के जनक श्री विष्णु राजौरिया ने मुझे 1984-85 में जब पत्रिका का दिल्ली प्रमुख नियुक्त किया था तो मेरी आयु 23-24 वर्ष के दरम्यान थी। उन्हों ने मेरा वेतन रखा था तीन हज़ार रुपये प्रतिमाह। जो कि, उन दिनों बहुत सम्मानजनक राशि हुआ करती थी। और भारत सरकार के राजपत्रित अधिकारियों को मिलने वाले वेतन से भी अधिक थी।

मेरे पिताजी को मेरी पत्रकारिता से परहेज न था पर वे चाहते थे कि मैं उनकी तरह सरकारी नौकरी में आ जाऊँ। वे उन दिनों केंद्र सरकार में निदेशक के पद पर कार्यरत थे।

मुझे अपनी पत्रकारिता और लेखन के चलते सरकारी नौकरियों के कई एप्वाइंटमेंट लेटर मिले पर मुझे वे रास नहीं आ रही थीं। इंटेलिजेंस ब्यूरो में इंटेलिजेंस ऑफिसर, यूनाइटेड बैंक में प्रोबेशनरी ऑफिसर, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली में हिन्दी अधिकारी। इन्हें मैं अस्वीकार कर चुका था।

फिर मुझे 1986 में भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड में अवसर मिला। पिताजी का आदेश हुआ 'इसे ज्वाइन कर लो!'।

शिखर वार्ता से भारी दिल से रिज़ाइन कर दिया।

सक्रिय पत्रकारिता छोड़ कर भेल की इस नौकरी में तनिक मन नहीं लग रहा था।

पत्रकारिता वापस अपने पास बुला रही थी।

बिना किसी को बताए, स्वर्गीय प्रभाष जोशी जी से मिला। वे न केवल जनसत्ता के संपादक थे बल्कि इंडियन एक्स्प्रेस समूह के संचालक थे। उन दिनों मैं जनसत्ता में लिखा भी करता था।

उन्हों ने मुझे ध्यानपूर्वक सुना। सरकारी नौकरी में मेरी फ्रस्ट्रेशन को भी समझा। साप्ताहिक हिंदुस्तान, धर्मयुग, रविवार, नवभारत टाइम्स में मेरी आवरण कथाओं को देखने के बाद बोले 'जनसत्ता में आ जाओ! पर पहले परीक्षा देनी होगी।'

मुझे परीक्षा से तनिक भय नहीं था। हिन्दी-अङ्ग्रेज़ी पर समान अधिकार था, दोनों में ही एमए (स्नातकोत्तर)। आकाशवाणी से हिन्दी समाचार पढ़ रहा था और वहाँ कैजुअल में समाचार सम्पादन भी कर रहा था।

चंडीगढ़ में हुए टेस्ट में मैं सबसे ऊपर रहा।

साक्षात्कार लेने के लिए बीच में स्वर्गीय प्रभाष जोशी थे और दायें बाएँ श्री बनवारी और श्री हरिशंकर व्यास। पूरे इंटरव्यू में बनवारी और हरिशंकर दर्शक और श्रोता ही रहे।

स्वर्गीय प्रभाष जी मुझे पहचानते तो थे ही।

प्रभाष जी सीधे ही बोले 'जनसत्ता में देर से आ रहे हो।'

'मैं आ तो रहा हूँ।' मैंने भी साफ कहा।

मैंने अनुरोध किया कि मैं सरकारी संस्थान से आ रहा हूँ तो मेरा वेतन प्रोटेक्ट किया जाय। वे मुस्कुरा दिये। मैंने कहा मेरी गति जल के समान हो जाएगी। वे बोले किस प्रकार? मैंने कहा 'जल शिव के सर पर रह कर भी गिरता चरणों में ही है। ऊंचाई से नीचे की तरफ आता है। जब मैं शिखर वार्ता का दिल्ली प्रमुख था तो वेतन तीन हज़ार रुपये महीना था जब भेल में आया तो चौबीस सौ हो गया। मेरा वेतन कम से कम तर होता गया। वे बोले 'और कुछ?'

मैंने कहा 'प्रशिक्षु के रूप में नहीं आऊँगा।' वे बोले 'क्यों?' मैंने कहा 'चाणक्य का एक श्लोक सुना दूँ?' वे बोले 'सुनाओ'।

'यो ध्रुवाणि परित्यज्य, अध्रुवाणि परिशेवति।
ध्रुवाणि तस्य नश्यंती, अध्रुवाणि नष्टिमेव हि।'

प्रभाष जी बोले इसका मतलब भी समझाओ।

मैंने कहा 'जो ध्रुव यानि अटल को छोड़ कर अध्रुव के पीछे भाग रहा है उसका ध्रुव (अटल) तो नष्ट होगा ही, अध्रुव तो लगभग नष्ट है ही। प्रभाष जी बोले इसका संदर्भ बताओ। मैंने कहा मैं सरकारी संस्थान की स्थायी नौकरी छोड़ कर आपके यहाँ प्रशिक्षु बनूँ और कल आप बाहर कर दें तो मैं तो सरकारी नौकरी से भी गया।

वे कुछ देर चुप रहने के बाद बोले "सुधेन्दु! मैं एक बात बॉम्बे एयरपोर्ट पर था। पीछे से गोयंदका जी ने मेरे कंधे पर हाथ रख कर कहा 'प्रभाष! इंडियन एक्स्प्रेस संभाल लो!' मैंने उनसे वेतन वगेरह की कोई बात नहीं की और पूरी ज़िम्मेदारी संभाल ली।"

उस दिन मैं भी प्रतिउत्पन्नमति में अपने शिखर पर था। मैंने कहा 'सर! एक बात कहूँ?' वे बोले कहो। मैंने कहा 'आपके और मेरे बीच बस एक टेबल है, यदि आप कहें तो मैं आपके पास आजाऊँ?' वे बोले क्यों? मैंने कहा 'आप मेरे कंधे पर हाथ रख कर कह दें कि सुधेन्दु तुम जनसता संभाल लो। फिर मैं भी आप से कुछ न बोलूँगा।'

श्री बनवारी और हरिशंकर मूर्तिवत बैठे रहे। प्रभाष जी बोले 'चलो दिल्ली चल कर तुम्हारा मामला तय करते हैं।'

दिल्ली पहुँच कर उन्हों ने मुझे दो वर्ष की वरीयता और इंक्रीमेंट बढ़ा कर रिपोर्टर पद का ऑफर ऑफ एप्वाइंटमेंट दिया।

आप इसे पढ़ते रहिएगा। संपर्क भाषा भारती की कथा अगले अंकों में भी जारी रहेगी।

संपर्क भाषा भारती पत्रिका के नवांक का स्वागत हो.....सादर, **(यह सब लिखवाने का श्रेय श्री रामानुज अनुज जी को....)**

सुधेन्दु ओझा

पत्रिका में प्रकाशित लेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं उनसे संपादक मण्डल या संपर्क भाषा भारती पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय-क्षेत्र नई दिल्ली रहेगा। प्रकाशक तथा संपादक : सुधेन्दु ओझा, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली110092

अनुक्रमणिका अगस्त —2022

क्रम सं:	शीर्षक :	लेखक :	पृष्ठ संख्या
1.	संपादकीय		2
2.	अनुक्रमणिका		3
3.	कहानी : अर्धांगिनी	कृष्ण मनु	4-5
4.	कविता	मनीषा जोशी मनी	6
5.	कविता	अंकुर सिंह	6
6.	कविता	राजेंद्र कुमार सिंह	6
7.	कहानी : प्रथम प्रणय की पहली बारिश	इन्दु सिन्हा	7-10
8.	संस्कृति विभाग का कार्यक्रम : प्रेमचंद स्मृति	डॉ सुभाष चन्द्र यादव	11-12
9.	लघुकथा : कुछ तो लोग कहेंगे	इन्दु सिन्हा	12
10.	कविता	अशोक तिवारी	12
11.	लघु कथा : ना जाने कौन सी खिड़की खुली थी	ब्रजेश श्रीवास्तव	13-14
12.	संदेश		14
13.	लघु कथा : ज़िंदा मैं	अशोक जैन	15
14.	कविता	शील निगम	15
15.	कविता	सूर्यादीप कुशवाहा	16
16.	कविता	डॉ मनोहर अजय	16
17.	कविता	सूर्य प्रकाश मिश्रा	16
18.	कविता	सविता चड्ढा	17
19.	कविता	सविता चड्ढा	17
20.	कविता	डॉ शिप्रा मिश्रा	17
21.	कहानी : नेमप्लेट	रामानुज अनुज	18-25
22.	गर्भपात कराना किसका अधिकार	सोनम लववंशी	26
23.	कहानी : नेपोकिडनी	दिलीप कुमार	27-29
24.	कविता	रमेश मनोहर	29
25.	आवरण कथा : लोक चेतना में स्वाधीनता ...	आकांक्षा यादव	30-34
26.	कविता	त्रिलोक सिंह ठकुरेला	35
27.	लघुकथा : कुछ बूंदें बस....	अनिल श्रीवास्तव	35
28.	लघुकथा : भविष्य	डॉ शील कौशिक	35
29.	हिन्दू संस्कृति का अपमान क्यों?	सोनम लववंशी	36
30.	संस्मरण : फणीश्वर नाथ रेणु	आलोक शर्मा	37-38
31.	असम में बाढ़ क्यों?	अरुण तिवारी	39-41
32.	लघुकथा : साहस	रामप्रसाद कूमावत	42
33.	कविता	बद्री प्रसाद वर्मा 'अनजान'	42

कृष्ण मनु

अर्द्धांगिनी

दूरदर्शन पर नित्य आ रहे भारतीय सैनिकों के विजय अभियान के समाचार देख-देख कर प्रमोद जोश से भर गया। प्रमोद क्या, उसके हम उम्र के सारे नवयुवक देशभक्ति की भावना से लबरेज हो उठे। सीमा पार के दुश्मनों को खदेड़ बाहर करने का जैसे जुनून सवार हो गया था उन पर। तभी तो दूसरे ही दिन जिला मुख्यालय में होनेवाले सेना में भर्ती आभियान में अन्य मित्रों के साथ प्रमोद ने भी भर्ती होने का निर्णय कर लिया। अब तो सिर्फ रात बीतने का इंतजार था।

खबर माता-पिता, भाई -भाभी तक पहुंच गई। समवेत स्वर से विरोध किया जाने लगा। प्रमोद के सारे तर्क काट दिये गये। उसे घुटने टेकने पडे। प्रमोद की नव विवाहित पत्नी विभा जिसके मेहंदी के रंग भी अभी फिके नहीं पड़े थे, किवाड़ की ओट से सारी बातें सुन रही थी।

भारी मन के साथ प्रमोद अपने कमरे में आया। उदास चेहरा बनाये पत्नी पलंग पर बैठी थी। उसने पत्नी का चेहरा हथेलियों में भरकर ऊपर उठाया। बडी़-बड़ी आखों में आंसू तैर रहे थे।

- ' पगली, तुम क्यों उदास हो ?'
- ' हटिए, मैं आप से बात नहीं करूंगी।'
- 'क्यों, क्यों नहीं बात करोगी? मुझसे नाराज हो ?' पत्नी की मीठी झिड़की सुन प्रमोद मुस्कुराया।
- ' हां, नाराज हूं आप से। आप की अर्द्धांगिनी हूं। आप पर मेरा भी अधिकार है। आप के फैसले पर मेरी सहमति की कोई जरूरत नहीं ?'
- ' अब छोड़ो भी, मैंने सेना में जाने का फैसला त्याग दिया है। यही चाहती थी न तुम ? अब तो खुश हो जाओ।' हाथ बढ़ा कर वह पत्नी को आगोश में समेटना चाहा।

पत्नी छिटक कर परे हट गयी- 'नहीं, कल आप सेना में भर्ती के लिए जाएंगे। आप सैनिक बनेंगे तो मुझे गर्व होगा। मैं सैनिक की बीवी बनकर फक्र महसूस करूंगी।' फिर पत्नी ने संशय दूर करना चाहा- 'बताइए, जाइएगा न ?'

पत्नी की इच्छा जानकर प्रमोद खुशी से पागल हो उसे गोद में भरकर नाचने लग।

- 'ओह प्रिये, मेरी जान, तुमसे यही उम्मीद थी मुझे। तुम सिर्फ तन से नहीं, मन से भी सुंदर हो।'

दूसरे दिन वह परिजनों के विरोध के बावजूद सेना में भर्ती होने के लिए तैयारी में जुट गया।

ट्रेनिंग के बाद प्रमोद की पहली ही पोस्टिंग पूर्वोत्तर की सीमा पर हो गई। खुफिया सूचनानुसार पूर्वोत्तर के पड़ोसी देश की सेना आये दिन देश की सीमा में प्रवेश करने की कोशिशें लगातार कर रही थी। ड्यूटी के दरम्यान एक दिन प्रमोद अचानक गायब हो गया। एक दो दिन तो इसी इंतजार में बीत गया कि रास्ता भटक गया होगा, खुद ही आ जायेगा। प्रमोद नहीं लौटा तो उसकी टुकड़ी के अन्य साथियों की चिंता हुई। न दुश्मन से मुठभेड़ हुई न गोलिया चली तो फिर प्रमोद गया कहाँ? चिंता वाजिब थी। प्रमोद को गायब होने के दो कारण हो सकते थे। पहला, दुश्मन की शरारत। उसने अपहरण कर लिया हो और दूसरा, जंगल में किसी हिंसक जानवर का शिकार हो गया हो। सारा जंगल छान मारा गया लेकिन कोई ऐसा सूत्र नहीं मिला जिससे यह साबित हो कि प्रमोद पर किसी जानवर ने हमला कर दिया है। पड़ोसी देश के सेना से पूछताछ की गई लेकिन उन्होंने साफ मना कर दिया। खुफिया तंत्र भी कुछ पता नहीं लगा सका।

महीने बीते, साल बिते लेकिन प्रमोद का कहीं पता नहीं चला। घर पर उसके लापता होने की खबर आई। सारा परिवार रोया, मातम मनाया लेकिन उसकी पत्नी विभा न रोई , न मातम मनाई। गुमसुम सी रहने लगी। परिजनों ने समझा, वह अवसादग्रस्त हो गई है। परिवार वाले उसका विशेष ख्याल रखने लगे। छोटे बच्चे उसके साथ खेलते, हँसाने की कोशिश करते। वह उनके साथ खेलती भी, हँसती भी लेकिन जैसे ही अकेली होती फिर गुमसुम हो जाती। उसे यकीन ही नहीं हो रहा था कि उसका पति उससे दूर हो गया है। शायद अब कभी वापस नहीं आएगा। पता नहीं क्यों उसे विश्वास था कि उसका पति एकदिन आएगा जरूर।

विश्वास की डोर इतनी मजबूत थी कि वर्षों बीत जाने के बाद भी टूटने का नाम नहीं ले रही थी। सात वर्ष बीत गए। परिजन उसकी अन्त्येष्टि सम्पन्न कर निश्चिंत हो गए। प्रमोद उनकी यादों में बस गया। वह याद बनकर अपनी पत्नी के दिलोदिमाग पर तो काबिज़ था ही , अपनी अर्द्धांगिनी के लिए जीवित भी था। वह प्रतीक्षा कर रही थी उसके आने की। लेकिन इधर परिवार वाले उसके मां-बाप तैयारी कर रहे थे उसकी दूसरी शादी की। उसके सास-ससुर की भी रजामंदी थी। आखिर इतनी कम उम्र में अकेला जीवन काटना क्या पहाड़ तोड़ने जितना कठिन नहीं था! विभा को जब उनकी योजना का पता चला तो वह बिफर उठी। उसने साफ साफ मना कर दिया-" मेरे पति की मृत्यु नहीं हुई है। वे आएंगे। उनके रहते आपलोग मुझसे दूसरी शादी के लिए विवश कैसे कर सकते हैं! आपलोगों का विवेक मारा गया है क्या?"

परिजनों ने उसकी बात को उसके अवसाद का नतीजा माना। फिर भी शादी की योजना उन्होंने आगे बढ़ा दी। उनकी सोच थी, समय सारे घाव भर देता है। यह भी एकदिन दुःख की दुनिया से निकल आयेगी। समय अनुकूल देख कर फिर बेटी से बात करेंगे। मां- बाप ने सोचा।

मां- बाप का सोचना पूरा नहीं हुआ। समय तो अनुकूल आया लेकिन वे जैसा सोचते थे

वैसा नहीं। बचपन की सहेली निशा विदेश से जब घर आई तो उसे सारी बातों का पता चला। हमेशा खुशदिल रहने वाली, बातूनी, हँसने-हँसानेवाली सहेली विभा पर आई मुसीबत से अवगत होते ही वह तत्काल उससे मिलने चली आई। दोनों सहेलियाँ वर्षों बाद मिली थीं। दोनों गले मिलकर रोती रहीं। दोनों ने एक दूसरे से बीते दिनों की यादें कभी हँसकर , कभी रो कर साझा किया। बात करते- करते एक क्षण के लिए निशा रुक गई। विभा को वह कुछ बताना चाहती थी लेकिन बताते हुए उसे संकोच हो रहा था। वह सोच रही थी, बताना उचित होगा या नहीं। कहीं विभा इस खबर से बुरा मान गई, खबर को व्यंग्य समझ लिया तब तो बहुत बुरा होगा। हमारे बीच गलतफहमी की दीवार खड़ी हो जाएगी। चुप ही रहना उचित है। अचानक रुककर निशा सोचने लगी। उसे चुप देखकर विभा जिद पर उतर आई-" मुझसे क्या छिपा रही हो निशा? अब हम इतने पराये हो गए।"

-" विभा, कहीं यह खबर सुनकर तुम बुरा न मन जाओ। मैं खुद ही असमंजस में हूँ। यह मेरा वहम भी हो सकता है। "

-" उत्सुकता में डालकर तुम मुझे अधीर कर रही हो , निशा। यह ठीक नहीं है। तुम तो कभी ऐसी नहीं थी। बताओ न, क्या बात है।" बगल में बैठी हुई निशा को झंझोड़ दिया विभा ने। वह वास्तव में बहुत ज्यादा उत्सुक हो उठी थी। उसे शक हो आया था कहीं मेरे प्रमोद से जुड़ी हुई कोई खबर तो नहीं है।

विभा की अधीरता देखकर निशा को कहना ही पड़ा। वह अत्यधिक गंभीर हो गई थी-" विभा, यह बात मैं केवल शक के आधार पर कह रही हूँ, दिल पर मत लेना। मैं विदेश से आने के बाद बिंदेश्वरी पहाड़ गई थी। देवी का मंदिर है पहाड़ के ऊपर। समझ लो कुल देवी हैं वो मेरी। कुछ भी मेरे घर मे शुभ कर्म होता है, हम देवी मां का आशीर्वाद जरूर लेते हैं।" विभा ने बीच में ही टोक दिया। निशा का भूमिका बंधना उसे इस वक्त अच्छा नहीं लग रहा था। वह अधीरता से बोली-" आगे बोलो न क्या हुआ?"

विभा की उत्सुकता चरम पर देखकर निशा बोलने लगी-"मंदिर के रास्ते के बगल में बहुत सारे भिखारी बैठकर भीख मांगते हैं। मैं पूजा सम्पन्न कर लौटते समय जब भिखारियों को भीख देने लगी तो----।" निशा फिर अटक गई। विभा का धैर्य जाता रहा। वह निशा को एकबार और झझोड़ते हुए बोली-" रुक क्यों गई? बोलो न।"

-" विभा, मैं क्या कहूँ। भिखारियों के बीच में एक नवजवान युवक जिसका एक हाथ कटा हुआ था। एक आँख भी नहीं थी। सिर के बाल बढ़े हुए थे। दाड़ी भी बेतरतीब बढ़ी हुई थी ,मुझे एकटक देख रहा था। सच कहूं विभा उस समय मुझे बहुत गुस्सा आया था। भयभीत भी हो गई थी उसे देख कर लेकिन ललाट के एक निशान और भूरी आँख देख कर मुझे लगा यह कहीं प्रमोद तो नहीं, विभा का पति। लेकिन दूसरे ही पल मैं अपनी

आशंका झटक कर आगे बढ़ गई। रास्ते भर मैं इस ग्लानि में गड़ी रही कि मैं इस तरह सोच भी कैसे सकती हूं सुंदर, सुशील, सेना के जवान विभा के हसबैंड के बारे में। मैं तो भूल ही गई थी उस घटना को लेकिन घर में जब तुम्हारे बारे में चर्चा चली तो पता चला कि प्रमोद बॉर्डर से गायब हो गए हैं। आजतक आये नहीं। यह सुनते ही यक- ब- यक उस घटना को याद कर मैं सिहर उठी थी। तय कर लिया था कि तुम्हें बताऊँगी जरूर।"

सारी बातें सुनकर विभा को काठ मार गया। एक क्षण के लिए मानो वह संज्ञाशून्य हो गई। वह बेजान-सी बिछावन पर गिर पड़ी। निशा ने सम्हाला उसे। विभा ने हाथ के इशारे से उसे आश्वस्त किया कि वह बिल्कुल ठीक है। फिर दोनों सहेलियों में यह तय हुआ कि बिना परिवार के सदस्यों को बताए, दोनों एक बार बिंदेश्वरी पहाड़ के मंदिर पर जाएंगी।

विभा की बेचैन आंखें भिखारियों के बीच उस खास शख्स की तलाशने लगी । उसकी भेदती नजर एक जगह आकर रुक गई एक अपाहिज युवा भिखारी पर। वह दूसरे भिखारियों में छिपाने की कोशिश कर रहा था। उसकी आंख में जैसे यमुनगंगा उमड़ आई थी। उसकी आंख में आंसू लगातार बहे जा रहे थे जिन्हें वह रोकने की नाकाम चेष्टा कर रहा था। विभा बिना देर किए उस युवक के सामने जाकर खड़ी हो गई-" उठिए, चलिए मेरे साथ।" विभा के ओठ फड़फड़ा रहे थे। आंखों में आँसू रोकने के बावजूद रुक नहीं पा रहे थे। वह इस वक्त अर्द्ध विक्षिप्त- सी थी। शरीर पर मानो नियंत्रण नहीं रह गया था उसका।

विभा के आदेश में पता नहीं कैसी ताकत थी, वह अपाहिज युवा चुपचाप विभा के पीछे चल दिया। बीच में उसने भागने की कोशिश भी की लेकिन ठीक पीछे निशा आकर खड़ी हो गई। पहले से निश्चित स्थान पर युवक को नहलाया गया, उसकी दादी मूछों की सफाई करवाई गई। हालांकि वह इस पूरी क्रिया के दरम्यान गिड़गिड़ाता रहा कि उसे छोड़ दिया जाए। वह बार- बार कहता रहा कि वह प्रमोद नहीं है।

साफसुथरा होकर नए वस्त्र पहनने के बाद उसे विभा के सामने लाया गया। नजर पड़ते ही विभा टूट कर प्रमोद से लिपटकर जार- जार रोने लगी-" किसके सहारे मुझे छोड़ दिये थे आप?" प्रमोद भी रो रहा था। उसका गला भी रुंध आया था-" बार्डर पार के दुश्मनों ने मेरा अंग - भंग कर दिया था। मेरा अपहरण कर मुझे कैद कर लिया था। फिर वे मुझे छोड़कर भाग गए गए थे । मैं कई दिनों से भूखे- प्यासे, घायल अंगों को घसीटते हुए आगे बढ़ता गया था जब तक होश में रहा। फिर मैं बेहोश हो गया। होश में आने पर मैं खुद को एक अस्पताल में पाया। मेरी जान बचाने के लिए डॉक्टरों ने मेरे अंग काट दिए थे। मैं जिंदा बच तो गया लेकिन किसी काम का नहीं रहा, न परिवार वालों के लिए, न तुम्हारे लिए। क्या मुंह लेकर मैं तुम लोगों के बीच जाता। तुम्हारा सामना में कैसे करता? खुद को नियति के हवाले कर मैं भटकता रहा। "

-"आप कैसे भूल गए कि मैं आपकी अर्द्धांगिनी हूँ। आपके अंग गए तो क्या हुआ? मेरे अंग भी तो आपके ही हैं। कभी अपने को अंगहीन नहीं समझियेगा। हम साथ रहेंगे। जहां भी रहेंगे। अब चलिए भी मां-पिता जी हमारी राह देख रहे होंगे।"

निशा धरती और आकाश के मिलन को डबडबाई आंखों से देख रही थी।

सावन...

बारिश की बूंदे ये बातें करती हैं .
धरती को छूकर वो सांसे भरती हैं.
मीठे मीठे अहसासों के आंगन में
परियाँ जलकण बनकर हमसे मिलती हैं..
बारिश की बूंदे ये बातें करती हैं... धरती को
छू कर वो सांसे भरती है...
सौंधी सौंधी खुशबू मन छू जाती है
भंवरे तितली कलियां गलियां भाँती हैं
पाती- पाती में भरकर जैसे यौवन हरियाली
धरती की गोद सजाती है
बारिश की बूंदे ये बातें करती हैं धरती को
छूकर वो सांसे भरती हैं...
रिमझिम सी ऐसी बरसातों में ही फिर.
यादों वाले थैले खोले जाते हैं
आभासी दुनिया मे देखो तब जाकर
मोती जैसे लोग तलाशे जाते हैं ..
ऐसे ही लम्हों को छूकर के ही तब .
लब में मुस्कानों की बगियां खिलती है
बारिश की बूंदे ये बातें करती है धरती को
छूकर व सांसे भरती है....
चौमासे के पहले पहले इस जल से.
वसुधा अनुपम पावन सी हो जाती है
कोयल के गीतों को सावन में सुनकर
मन की डोरी तुझ तक पेंग बढ़ाती है
सुंदरता के ऐसे अविरल दर्शन से..
इस जीवन की पीड़ाए भी टलती है
बारिश की बूंदे ये बातें करती हैं धरती को
छूकर वो सांसे भरती हैं....

मनीषा जोशी मनी

जन्माष्टमी

भादो मास के अष्टमी,
कृष्ण लिए अवतार।
पुत्र मैया देवकी का,
बना सबका तारणहार।।

मथुरा के कारागार में जन्मे,
बाल-लीला किए गोकुल में।।
यमुना किनारे खेले-खाले
शिक्षा लिए गुरुकुल में।।

गोकुल में चोरी - चोरी,
माखन चुरा खूब खाते थे।
मित्र-मंडली और यारो संग,
कृष्ण गईया चराने जाते थे।।

हाथो में होती इनके मुरली,
मुकुट की शोभा बढ़ाता मोर।
यशोदा मैया का ये लाडला,
कहलाता आज भी माखन चोर।।

हे केशव, हे माधव, सुनो हे गोपाल,
इस जीवन में पीड़ा मुझे है अपरम्पार।
मुरली वाले प्रभु, मुरली बजाकर ,
कर दो मेरी नैया को तुम पार।।

आज पर्व है प्रभु जमाष्टमी का,
कर दो मुझपर इतना उपकार।
हर पल, हर क्षण हम भक्ति करे,
और तुम करो मेरे जीवन का उद्धार।।

अंकुर सिंह

कैसा हो गया इंसान

है परवरदिगार,हे भगवान
आज के दुनिया का
कैसा हो गया इंसान
आदमी-ही-आदमी का ले रहा है जान

कहीं भूखे नंगो की टोली
कहीं गुंजार कहीं ठिठोली
कहीं प्यार मोहब्बत की बातें
कहीं नफरतजादों की टोली
अहम,मद में चुर हो कहते
अपने गर का नहीं पहचान
आदमी ही आदमी का ले रहा जान

सरहदवासी भूले स्माइल
दुश्मन दाग रहा मिसाइल
कैसे पनपा नफरत के शोले
क्षण-प्रतिक्षण तोप के गोले
खेल रहे खुशी खुशी होली
कहते बढ़ी अपनी शान
आदमी-ही-आदमी का ले रहा ह जान

समाया है यूं भय की छाया
कैसे अपना हो गया पराया
मुल्क का गर्म हुआ मिजाज
भूले हम इज़्ज़त औ लिहाज
कब तक झेले गर्दिशजादों को
होत भिनसारे जगता शमशान
आदमी-ही-आदमी का ले रहा जान

राजेन्द्र कुमार सिंह

प्रथम प्रणय की पहली बारिश

इन्दु सिन्हा "इन्दु"

आज सुबह से ही दिल बड़ी जोर से धड़क रहा था ना जाने क्यों? रह रह कर तुम्हारा चेहरा मेरी नजरों के सामने आ जाता था| और मेरे हाथ तेजी से घर का काम पूरा करने में लगे हुए थे| ऐसा महसूस हो रहा था | ना जाने किस पल तुम आ जाओ फिर जब मैं दरवाजा खोलनेजाऊं तो मेरी अस्त-व्यस्त दशा में, मेरी कोई बात तुम्हें बुरी ना लग जाए, और तुम कहीं मुझसे नाराज हो गए तो ?नहीं नहीं बिल्कुल नहीं, तुम्हें नाराज नहीं करना है |बचपन से जिस चेहरे की तलाश थी मुझे आज इस मोड़ पर तो सामने आया है |फिर उसकी नाराजगी ना ना तुम्हारी नाराजगी की कल्पना से ही मेरा दिल कांप जाता है| मैं तुम्हें अपने से नाराज तो कभी देख ही नहीं सकती| तुम अगर मुझसे रूठ गए तो मैं क्या तुम्हें मना पाऊंगी? इसलिए मैं तो तुम्हारे नाराज होने की बात भी ख्यालों में कभी नहीं लाती |क्या करूं मन है कि वही सोचता है जो उसके रोम रोम में बस जाए| आज सुबह जब चार बजे उठी तो मन पढ़ने में भी नहीं लगा, किताब के हर पेज पर तुम्हारा मुस्कुराता हुआ चेहरा झांकने लगताथा, ऐसा लगता था तुम अभी अभी बोलने ही वाले हो हेलो! कैसी हो ?और फिर वही दिल का जोर से धड़क उठना| एक अजीब सी घबराहट हावी हो जाती थी| जब तुम मुझे देखते थे ऐसा लगता था मैं किसी मोम की भांति पिघल रही हूँ| सच! क्या इसी को प्रेम कहते हैं? नहीं-नहीं शायद नहीं, लेकिन फिर मैं क्या करूं? कैसे सामना कर उन पलों का जब तुम मेरे सामने हो और मुझे कुछ कहना हो|

अचानक तेज गंध सीआई ओ- भगवान, यह तो जलने की बू है मैं तेजी से किचन की तरफ दौड़ी चाय का पतीला पूरा काला पड़ चुका था| और उसमें से धुंआ निकल रहा था, याद आया मैंने चाय रखी थी बनने को पर तुम्हारे ख्याल, सच हर कहीं सामने आ जाते हैं|

जुलाई का महीना था, लगता है रात में तेज बारिश हुई है मैंने सोचा छत पर थोड़ी देर टहल लिया जाए| फिर कुछ समय बाद फ्रेश मूड से पढ़ने की कोशिश की जाए, यह सोचकर मैं छत पर चली गई, पूरी छत पर मेरे अलावा कोई नहीं था पूरा अपार्टमेंट नींद की आगोश में था| ये सब जल्दी क्यों नहीं उठ जाते ?फिर याद आया रविवार था संडे को देर से बिस्तर छोड़ ना पसंद करते हैं लोग| अपार्टमेंट के पीछे दूर तक घने वृक्षों की कतारें तथा हरियाली थी| बारिश की बूंदे वृक्षों के पत्तों पर ठहरी हुई थी, किसी वृक्ष पर नहीं नहीं रंगीन जंगली चिड़िया बैठी थी| तो कहीं किसी वृक्ष की डाली पर कोई तोता चुपचाप बैठा था| मानोप्रकृति के इस सुंदर रूप का मन ही मन आनंद ले रहा हो| पक्षी कितना अधिक प्रकृति के नजदीक होते हैं| हवाओं की ठंडक, हम मनुष्य तो बस एहसास करते हैं | पक्षी तो ठंडी हवाओं के मध्य से गुजर कर उसे अपने अंतर में उतार लेते हैं| कितना सुकून मिलता होगा उन्हें प्रकृति की गोद में| सुकून मुझे कब मिला था? वहां दूर घने वृक्षों की शाखों के पीछे से ऐसा लगा, तुम्हारा चेहरा मुस्कुराया हो धीरे से| मुझे देख कर तुम वापस उसी वृक्ष की घनी शाखो के पीछे छुप गए हो| हरियाली और खामोश पेड़ों की गहरी चुप्पी ऐसी लग रही थी कि कोई मुनि,साधु गहरे ध्यान में खोया हुआ हो| कभी-कभी खामोश हो रह कर भी खामोशी को कहीं भीतर तक उतारना अपने आप में एक अलग ही सुकून देता है| जिससे कि शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता| तभी हल्की सी फुहार शुरू हो गई धीमी धीमी, मैंने सामने घने वृक्ष पर बैठे तोते को देखा तो पाया उसे रिमझिम फुहार से कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा था |वह वैसे ही तटस्थ बैठा था या फिर भीगने का आनंद उठा रहा था| तोता बेहद स्वस्थ व चमकीला था, मन कर रहा था उस तोते को पकड़कर उसके शरीर पर से वर्षा की बूंदों को साफ करके भी मैं से उसे चूम लू| पर ऐसा नहीं हो पाएगा हमारे बीच बहुत फासला है |वृक्ष दूर भी है,ऊँचा घना भी| सिर्फ ख्याल था खूबसूरत सा| मुझे याद आयी तीन दिन पहले कॉलेज की वह शाम जब इन्ही रिमझिम फुहारों ने मुझे रोक लिया था| सुबह से ही तेज धूप और खुले मौसम के कारण में छतरी लेकर कॉलेज नहीं गयी| लेकिन दोपहर के बाद से ही आसमान पर बादलों का सांवलापन अधिक गहराने लगा | था |मेरा हिंदी

का पीरियड खत्म होते-होते बूंदाबांदी शुरू हो गयी| मैं अन्य गर्ल्स के साथ लाइब्रेरी के बाहर ही खड़ी हो गयी| क्योंकि लाइब्रेरी का दरवाजा सड़क पर ही खुलता था| जहाँसे कोई दिख जाए तो घर पहुँचूँ| इतने में तुम कार पार्किंग से अपनी कार निकालते हुए दिखे,अचानक कार को मोड़ते हुए तुम्हारी आँखों से मेरी आँखे टकराई तुमने लाइब्रेरी तक आते-आते कार धीमी की| मुझे देख कर गहरी मुस्कान तुम्हारे होठों पर आयी, बोले" प्रीत आओ तुम्हें घर छोड़ दूंगा" मैं यंत्र चालित सीआई तुम कार का दरवाजा खोल चुके थे, मैंने दरवाजा बंद किया लेकिन ठीक से वह बंद नहीं हुआ था, शायद, तुमने थोड़ा नजदीक आकर दरवाजे को ठीक से लॉक किया उतने ही पल में तुम्हारा करीब आकर दरवाजा लॉक करना वह हल्का सा स्पर्श वह भीनी भीनी सी खुशबू मेरे अंतर में उतर गई थी| कार धीमे-धीमे सड़क पर चलने लगी बारिश होने से तुम धीमे ड्राइव कर रहे थे वाइपर अपने काम में लगे थे|

प्रीत क्या सोच रही हो ?पराग ने सड़क पर देखते हुए कहा मैंने उसकी ड्राइविंग का फायदा उठाया कई बार उसे मैंने चोर नजरों से देखा क्या पता क्या था उसके चेहरे में मन था कि बंधा रह गया, अनजानी डोर से,आँखे थी कि उसकी मुस्कान को देखना चाहती थी| थक जाने की हद तक, लेकिन ना हो सका अजीब सा लगेगा उसे सोचेगा कैसी लड़की है? क्या वह भी ऐसा सोचता है ?पसंद करता है जितना कि मैं पता नहीं बारिश थमने का नाम नहीं ले रही थी |

प्रीत कॉफी पीयोगी? पराग की नजरें अब भी सड़क पर थी प्रीत की नजरें पराग के चेहरे पर, विवश होकर नजरें हटानी पड़ी मैंने तुमसे पूछा है कहां हो तुम? पराग का स्वर इस बार थोड़ा ऊँचा था| कहीं नहीं बोलो क्या ?कॉफी? नहीं पराग देर हो जाएगी मैंने अचानक हड़बड़ा कर कहा

छोड़ो भी यार, नहीं होगी देर मैं कॉफी हाउस गाड़ी मोड़ रहा हूँ,

मैं कुछ करती तब तक पराग गाड़ी जावरा कंपाउंड से रीगल टॉकीज की ओर मोड़ चुका था| क्या फिल्म दिखाने ले जा रहे हो मैंने थोड़ा हल्के मूड में कहा,

नहीं मुझे फिल्म देखना वैसे भी पसंद नहीं तीन

घंटे एक ही जगह पर, ना बाबा ना मैं नहीं बैठ सकता |इतनी देर, पराग ने कहा फिर हम कहां जा रहे हैं मैंने पूछा हम इंदौर कॉफी हाउस जा रहे हैं समझी, इन्दोर कॉफी हाउस एमजी रोड पर पड़ता है, यह पता था मुझे, पराग ने गाड़ी पार्क की फिर करीब आकर बोला अब उतरो भी ,

पराग बारिश में भीग जाएंगे, चलो अब नखरे छोड़ो सामने दो कदम की दूरी तक चलना है समझी|

पराग जब "समझी" कहता था तब बड़ा अच्छा लगता था |खैर जब हम अंदर पहुंचे तो दो-तीन टेबल को छोड़कर पूरा कॉफी हाउस खाली था|पराग ने कोने की एक टेबल पर कब्जा जमाया फिर मुझसे पूछा कॉफी के साथ क्या लोगी जो तुम्हारा मन कहे ,

अब बोलो भी पराग के अंदाज में थोड़ी झुंझलाहट भरी थी और मुझे अच्छा लग रहा था |

पनीर पकोड़े चलेंगे? पराग की नजरें फिर मेरे चेहरे पर जम गई| चलेगा मैंने इससे अधिक कुछ नहीं कहा कॉफी आने तक मैं पराग के सामीप्य का पूरा पूरा आनंद उठाना चाहती थी,

प्रीत, पराग का धीमा नशीला स्वर,

हां कहो मैंने कहीं डूबते हुए जवाब दिया,

कुछ नहीं कह कर पराग मुस्कुरा दिया कॉफी हाउस में हल्का गुलाबी प्रकाश फैला हुआ था, कितनी जानलेवा मुस्कान है कहीं ऐसा तो नहीं मैं ही ज्यादा सोचती हूँ ,पराग के बारे में शायद,

वेटर कॉफी के साथ पनीर पकोड़े रखकर जा चुका था |कॉफी की धीरे-धीरे उठती भाप हम दोनों के चेहरे के मध्य किसी चिलमन सा काम कर रही थी| तभी पराग ने पनीर का एक पकोड़ा उठाया धीरे से मेरे होठों की तरफ बढ़ाया मैंने शायद एक पल ही सोचा होगा फिर होंठ खोल दिए, लेकिन यह क्या, सिर्फ आधा ही पकौड़ा खिलाकर शेष बचा पकोड़ा पराग ने खुद खा लिया |उसका वह अंदाज गहरे तक उतर गया|

जब हम कॉफी हाउस के बाहर निकले तब तक बारिश हल्की हो चुकी थी घर पहुंचने तक हम दोनों ही चुप थे| कार से उतरते समय पराग ने प्रश्न किया "प्रीत अब कब मिलोगी ?

मैं कुछ बोल नहीं पायी,

अच्छा ठीक है मैं इस संडे को घर आता हूं बाय-बाय| देखते ही देखते पराग की गाड़ी धीरे धीरे नजरों से ओझल होती चली गयी| अचानक तेज आवाज में कोई जंगली चिड़िया मेरे पास से गुजर गई मैं ख्यालों के भंवर से वापस आ गयी|तेजी से सीढ़ियां उतरती हुई घर आ गई|

अभी सब सोए हुए थे, चलते हैं थोड़ी पढ़ाई कर लेते हैं, यह सोच कर थीसिसपर कुछ कार्य करने का सोचा एक पेज पलटा हीथा, फिर तुम्हारा चेहरा| सोचा तुम्हें फोन कर लूं, मोबाइल उठाया जैसे ही मोबाइल पर तुम्हारा नंबर आया बहुत देर तक मैं तुम्हारे नाम के साथ वह नंबर देखती रही लेकिन कॉल करने

का साहस नहीं हुआ|

सच जो हमें प्रिय होता है उसकी छोटी-छोटी बात भी हमें बेहद पसंद आती है चाहे वह उसका मोबाइल नंबर ही क्यों ना हो, देर तक उस नंबर को भी नहीं निहारना कितना अच्छा लगता है ना जाने कितनी देर तक मोबाइल पर पराग का नाम देखती रही, इतने में दरवाजा जोर -जोर से बजाया जाने लगा मेरे दिल की धड़कन एकदम से तेज हो गई और घबराहट के मारे मोबाइल फर्श पर ,एकदम से दौड़कर दरवाजा खोला देखा तो कामवाली बाई थी| मेरी धड़कनें सामान्य हुई|

सारा दिन मुझे चैन नहीं आया हर आहट पर दिल तेजी से धड़कने लगता और मैं पसीने से नहा उठती| ना जाने कितनी बार उसका नाम हथेली पर लिख लिख कर मिटाया कभी धीरे से उस नाम को होठों से स्पर्श किया पर इंतजार के पल लंबे होते चले गए| पराग नहीं आया मन में आया फोन करके आने का समय पूछ लूं लेकिन साहस नहीं हुआ|

दोपहर के लगभग दो बजे जब खाना खाकर अपने कमरे में गई तब भी मन अशांत था, कब आएगा पराग समय क्यों नहीं बताया ?थोड़ी देर कर लेते हैं इंतजार, शायद शाम को आए,आँखों मे नींद का पता भी दूर दूर तक नहीं था| अजीब सी बेचैनी मेरे पूरे दिलो दिमाग पर छाई थी मुझे पूछना था पर आपसे कि वह कब आएगा ?हो सकता है उसने यूं ही कह दिया हो नहीं यूं ही वह कैसे कर सकता है मजाक है क्या?

थोड़ी देर टीवी ही देख लिया जाए शायद समय बीत जाए सोचकर टीवी ऑन किया तो फिल्म मंजिल का गीत दिखाया जा रहा था,

रिमझिम गिरे सावन सुलग सुलग जाए मन"

फिर वही बारिश मेरे ख्यालों में पार्किंग से कॉफी हाउस तक हल्की बारिश के साथ साथ भीगते हुए जाने के चित्र उभरने लगे, पराग का साथ कितना सुरक्षित लगता है, कितना सुकून भरा|, ना जाने कब आएगा, अरे चेहरा तो ठीक से संवारा नहीं एक बार ठीक से फ्रेश हो जाँऊ? नहीं तो सुस्ती बिखरी रहेगी चेहरे पर ना जाने क्या सोचेगा? यही सोचकर वाशबेसिन पर जाकर ठंडे पानी से चेहरा धोया, तो हल्का सा महसूस हुआ |उदासी चेहरे पर छाई बेचैनी को साफ बता रहा था| आंखों में अजीब सा

खोयपन तैर रहा था| दर्पण में एक दूसरी ही प्रीत का अक्स था|

मुझे लगता है चेहरे पर आंखें,होंठ विशेष होते हैं इन्हें अधिक खूबसूरत होना चाहिए, आंखें तो मेरे पास खूबसूरत है, कुल मिलाकर मुस्कुराहट की तारीफ भी अक्सर गर्ल्स करती है| लंबाई भी अच्छी है, रंग गोरा नहीं साफ कहा जाता जा सकता है| बालों को खुला रखूं या रंगीन स्कार्फ में बांध कर रखूं|

इतने में कॉल बेल की तेज आवाज ने मेरी दिल की धड़कनों को एकदम से बढ़ा दिया| पूरा शरीर एकदम से काँप उठा, कपोल एकदम से गर्म हो थे मैं लगभग भागती हुई दरवाजे के पास पहुंची एक पल सोच कर मैंने एकदम से दरवाजा खोल दिया दरवाजे पर धोबन खड़ी थी| प्रेस के लिए कपड़े लेने को| उसे देखते ही मेरा इंतजार एक तीखे गुस्से में बदल गया, मैंने कठोरता से कहा यह कोई समय है कपड़े मांगने का ?

मेमसाब दोपहरी के बाद ही तो हम आते हैं कपड़े लेने को आप देख ले कितना बजा है मैंने तुरंत घड़ी की तरफ नजर डाली शाम के 5:00 बज चुके थे| ओह- शाम हो चुकी है| तब तक मेरे इंतजार की घड़ियां चरम सीमा पर पहुंच चुकी थी मैंने मुझे मन से धुले हुए कपड़े निकाले और धोबन को प्रेस के लिए दे दिए|

दरवाजा बंद करके जब अपने कमरे में आई ऐसा लगा कि इंतजार की जगह गुस्से ने ले ली है मैंने क्यों नहीं पूछा कि वह कब आएगा? काश! मैंने पूछा होता यह इंतजार, हर आहट पर इतनी बेचैनी, घबराहट क्या करूं? मैं, ना वो आया ना फोन किया, फिर कब आएगा? हर दस्तक मेरा दिल धड़का देती है, हर आहट पर मैं घबरा जाती हूँ, और किस बात पर मैं इतनी बेचैन हूँ, और मैं फूट-फूट कर रो पड़ी, तकिया मेरी तन्हाई में बहाए आँसुओं का गवाह बन गया, रोते-रोते ना जाने कब मेरी आंख लग गई| पर उस संडे को पराग नहीं आया, तो नहीं आया, सोमवार को भी मेरा कॉलेज जाने का मन बिल्कुल नहीं कर रहा था, फिर वही कल का जानलेवा और मीठा कसक भरा इंतजार नजरों के सामने घूम गया| गुस्सा भी इतना आ रहा था अपने आप पर कि मन कर रहा था कि मैं उससे कभी बात नहीं करूं| पर जब वह दो-चार दिन बाद अपनी कार लेकर कॉलेज के गेट पर मिला जाता है, तो भूल जाती हूं पुरानी शिकायतें ,आज कॉलेज नहीं जाऊंगी करने दो जनाब को इंतजार |कुछ दिन इंतजार, एक-एक पल को धीरे-धीरे जाते हुए देखना फिर भी खबर नहीं आना, फोन नहीं आना मेसेज नही करना| कम से कम पंद्रह दिनों तक कोई बात नहीं करूंगी| ना ही फोन करूंगी ना ही किसी प्रकार का मेसेज| मित्रता की कोई पहचान नहीं दोस्तों के साथ भी ऐसा सलूक? आश्चर्य है?

सुबह के सात बजने को थे, मम्मी ने अभी-अभी चाय टेबल पर रखी थी, चाय का कप लेकर मैं बालकनी में आ गई, मौसम में हल्की ठंडक घुली हुई थी| लगता है सारी रात बारिश होती रही थी| पेड़ों की ताजगी देखते ही बनती

थी, अभी फिलहाल बारिश बंद थी, पर नन्ही नन्ही फुहारे रुक रुक कर जारी थी| बादल ऐसे लग रहे थे मानो पेड़ों के शिखर पर पसर गए हो| रात भर बरसने के बाद थक कर आराम कर रहे हो फिंजा में नमी थी| इस नमी ने भी उस वातावरण को रोमांटिक बना दिया था| मौसम बेहद खुशनुमा था |ऐसे में पराग का यह व्यवहार बड़ा तकलीफ देता है| वह क्यों नहीं समझता, इन गुलाबी बातों को ,गुलाब की खुशबू में पके हुए ख्यालों को, कैसा कठोर दिल है पराग का? उसके दिल में क्या यह सब बातें नहीं आती? किस बात का घमंड है? उसे दौलत का? अपनी स्मार्टनेस का? पता नहीं किस बात पर इतनी अकड़ दिखाता है? अब जब भी मिलेगा तो जरूर पूछूंगी ऐसा व्यवहार वह करता क्यों है?

आज तो मूड खराब होने से नींद भी देर से खुली मॉर्निंग वॉक पर भी नहीं जा पाई ,पर आप भी परेशान करके पता नहीं कुछ लोग ऐसे होते हैं ,जिन्हें दूसरों के दुख से सुखी होने की आदत होती है| पराग शायद उन्हें उन्हीं में से हो? लगता तो नहीं, फिर कहा क्या जा सकता है? उसके अंतर में क्या छुपा है? भगवान जाने मुझे सोचना था पराग से दोस्ती से पहले| लेकिन विचारों की समानता ही हमारी दोस्ती का आधार बन गई थी|

मन कर रहा था पराग के साथ कहीं दूर इस धीमी-धीमी बारिश में चलकर भीगा जाए| जंगल में कहीं ऊंची नीची पहाड़ियों के बीच, भीगे पेड़, भीगी सड़के, भीगा-भीगा हर फूल, धुली निखरी हर बात, बिल्कुल उजली सी| सुबह भी सफेद कोरे कागज सी कितनी सफेद है| लिख दूँ इस पर कोई अच्छी कविता या फिर पराग की कोई प्यारी सी ग़ज़ल| मुझे याद आया अलीपुरद्वार का झील का वह सुंदर नजारा जहां चमकते सफेद गोल पत्थर झील के किनारों में कितने सुंदर दिख रहे थे| बांस से बनी खूबसूरत कॉटेज जो दिखने में दूर से किसी चित्र की भांति लग रही थी, पर करीब देखने पर ही मालूम होता कि यह कॉटेज है, ऐसी ही सुंदर सी कॉटेज में पराग के साथ चलकर इस बारिश का जमकर आनंद लिया जाए| लेकिन उसकी यह बात बात पर रूठनेवाली आदत परेशान कर देती है मुझे| दोस्तों में यह नखरे वाली आदत तो होनी नहीं चाहिए| क्या पता कब छोड़ेगा अपनी ए रूठने की आदत|

प्रीत आज कॉलेज नहीं जाओगी? प्रीत के कानों में मम्मी की आवाज जैसे ही पड़ी वह खयालों से बाहर आयी|

प्रीत की मम्मी अपनी बेटी के चेहरे पर छाए उतार-चढ़ाव को देख रही थी, मुलायम स्वर में बोली आज सोमवार है कॉलेज का पहला दिन जाओ तैयार हो जाओ|

नहीं मम्मी आज मूड नहीं, पराग भी परेशान करता है, कल कहा था आने को नहीं आया मेरा मूड खराब था, अच्छा देखो, कॉलेज में मिले तो उसे डांट देना मम्मी बोली।

नहीं मम्मी डांट भी सुन कर मुस्कुरा देता है, मैंने कहा|

अब तू जाने और पराग मैं चली, घर में काम भी बड़ा है मम्मी चली गयी|

मैं भी चली जाती हूं कॉलेज लेकिन पराग से बात नहीं करूंगी सोचते सोचते मैं कॉलेज के लिए तैयार होने लगी, घर से कॉलेज की दूरी मुझे विशेष नहीं लगती थी मुझ में एक आदत है जब भी मैं पराग के संबंध में सोचना शुरु कर दी तब समय तो मानो पंख लगा कर ना जाने कहां उड़ जाता है, पता नहीं चलता घंटों कैसे गुजार जाते हैं| उसका एक ख्याल ही मुझे रातों को बेचैन किए रहता रात में दो बजे तक मैं बेचैन सी केवल आसमान में सफर करते चांद को देखती रहती, बड़ा परेशान करता है यह लड़का मुझे क्या करें ?उसकी इंतजार कराने की आदत का, मिलने दो कॉलेज में बिल्कुल बात नहीं करनी, कैसा दोस्त है? अपनी दोस्ती की परवाह नहीं करता| उसे अहसास नहीं इंतजार करने में कितनी तकलीफ होती है|

मेरा पीरियड यू भी सेकंड था, फर्स्ट पीरियड तो मुझे यूँ ही खाली रहना ही था, इसलिए विशेष जल्दी कुछ नहीं था, यही सोचते की यही सोचते-सोचते मधुमिलन टॉकीज तो निकल ही गया| कॉलेज जावरा कंपाउंड में था| पहला जो खाली पीरियड था उसे लाइब्रेरी में बिताते हैं| पिछली बार वह शिवानी की पुस्तक तलाश रही थी शायद वह मिल जाए? यही सोच कर मैंने पर्स में लाइब्रेरी का कार्ड निकाला ही था कि पराग की कार की झलक दिखाई दी, कुछ पलों बाद कार मेरे ठीक सामने खड़ी थी|

मैं तुमसे कभी बात नहीं करूंगी कभी नहीं कदापि नहीं| तुम परेशान करते हो, इंतजार करवाते हो समय के पाबंद बिल्कुल नहीं हो, तुमको पता है कितनी तकलीफ होती है, इंतजार करने में| बोलते बोलते मैं अपने आँसू रोक ना सकी और आँसू मेरे गालों पर बह निकले|

अरे अरे प्रीत ये क्या?' पराग बेहद घबरा गया, तुरंत कार का दरवाजा खोलकर नीचे उतरा मुझे कंधों से पकड़ कर तुरंत ही कार की अगली सीट पर बैठाया, तेजी से दूसरी और खुद आकर बैठ गया| कार धीरे-धीरे ड्राइव करनी शुरू कर दी, साथ ही मुझे समझाने भी लगा प्रीत आगे से ऐसा नहीं होगा प्लीज चुप हो जाओ| नहीं होना मुझे चुप बोलो क्या करोगे? मैं जोर से बोली प्लीज, प्रीत रियली वेरी सॉरी|' पराग ने कहते कहते मुझे अपने में समेट लिया मेरे आँसू उसके कंधे को भिगोने लगे थे| बारिश शुरू हो गई थी धीमे-धीमे|

समाज की विसंगतियों पर सदैव कलम चलाई मुंशी प्रेमचंद ने

. पोस्टमास्टर जनरल कृष्ण कुमार यादव

'मुंशी प्रेमचंद लमही महोत्सव-2022' के क्रम में संस्कृति विभाग, उ.प्र.

और काशी विद्यापीठ की ओर से राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन

वाराणसी : मुंशी प्रेमचंद एक साहित्यकार, पत्रकार और अध्यापक के साथ ही आदर्शोन्मुखी व्यक्तित्व के धनी थे। एक पत्रकार को कभी भी पक्षकार नहीं होना चाहिए, उसे अपने कर्तव्य का निर्वहन करना चाहिए। प्रेमचन्द ने अपने को किसी वाद से जोड़ने की बजाय तत्कालीन समाज में व्याप्त ज्वलंत मुद्दों से जोड़ा। उनका साहित्य शाश्वत है और यथार्थ के करीब रहकर वह समय से होड़ लेती नजर आती हैं। उक्त उद्गार चर्चित साहित्यकार एवं वाराणसी परिक्षेत्र के पोस्टमास्टर जनरल श्री कृष्ण कुमार यादव ने 'मुंशी प्रेमचंद लमही महोत्सव-2022' के क्रम में संस्कृति विभाग, उत्तर प्रदेश और महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी के संयुक्त तत्वावधान में 'प्रेमचंद : अध्यापक और पत्रकार' विषयक दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता करते हुए व्यक्त किये। उन्होंने कहा कि मुंशी प्रेमचंद का समाज के अंतिम व्यक्ति से विशेष अनुग्रह था और समाज की विसंगतियों पर उनकी कलम हमेशा चला करती थी। उनकी कहानी, उपन्यासों और पटकथाओं में सामाजिक कुरीतियों पर करारा प्रहार होता था। पोस्टमास्टर जनरल श्री कृष्ण कुमार यादव ने कहा कि लमही, वाराणसी में जन्मे डाककर्मी के पुत्र मुंशी प्रेमचंद ने साहित्य की नई इबारत लिखी। आज भी तमाम साहित्यकार व शोधार्थी लमही में उनकी जन्मस्थली की यात्रा कर प्रेरणा पाते हैं।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष प्रो. प्रणय कृष्ण ने बतौर मुख्य अतिथि एक अध्यापक और पत्रकार के रूप में प्रेमचंद की प्रासंगिकता को रेखांकित किया। उन्होंने प्रेमचंद के जीवन की कुछ घटनाओं का भी जिक्र किया। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग के पूर्व विभागाध्यक्ष प्रोफेसर बलिराज पांडेय ने कहा कि प्रेमचंद जाति धर्म और आर्थिक विषमता की गाँठों को तोड़ना चाहते थे। संगोष्ठी में प्रो. बसंत त्रिपाठी, प्रो.

सुरेन्द्र प्रताप, प्रो नीरज खरे, डॉ. रविनन्दन सिंह ने विचार व्यक्त किया। मुख्यमंत्री अभ्युदय योजना के वाराणसी प्रभारी डॉ. आर एस चौहान ने कहा कि जन-जन तक प्रेमचंद पहुंचे इसके लिए यूट्यूब और फेसबुक चैनल पर इस विचार गोष्ठी का लाइव प्रसार किया जा रहा है।

अतिथियों का स्वागत करते हुए क्षेत्रीय सांस्कृतिक केन्द्र के प्रभारी सुभाष चन्द्र यादव ने कहा कि प्रेमचंद न सिर्फ एक साहित्यकार बल्कि एक कुशल पत्रकार भी थे। विषय प्रवर्तन करते हुए काशी विद्यापीठ हिन्दी विभागाध्यक्ष प्रो. निरंजन सहाय ने कहा कि शिक्षक असाधारण होता है। प्रेमचंद एक असाधारण शिक्षक थे। प्रेमचंद के बहुत सारे आयाम है, जिस पर प्रकाश डालने की जरूरत है। प्रेमचंद को केवल साहित्यकार ही नहीं बल्कि अध्यापक के रूप में भी उनकी जीवनी को पढ़ा जाना चाहिए। धन्यवाद ज्ञापन करते हुए पत्रकारिता संस्थान के निदेशक प्रो अनुराग कुमार ने कहा कि प्रेमचंद ने कभी भी अपनी लेखनी से समझौता नहीं किया। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों और समसामयिक मुद्दों को अपनी लेखनी के केन्द्र में रखा। कार्यक्रम का संचालन डॉ. प्रीति ने किया।

(डॉ.सुभाष चन्द्र यादव)

प्रभारी-क्षेत्रीय सांस्कृतिक केन्द्र, वाराणसी, उत्तर प्रदेश

"कुछ तो लोग कहेंगे"

कोरोना महामारी में रितेश का बिजनेस बन्द हो गया था | घर में बेटी मीनल की शादी | क्या करें ? कर्जा लेने के लिए सब दूर कोशिश कर रहा था |बड़ी मुश्किल से पाँच लाख जमा कर पाया था |

होने वाले दामाद रंजन ने मना किया था कि मुझे कुछ नही चाहिए गहने और महंगे सामान के चक्कर मे परेशान ना हो,घर मे सब भौतिक सुख सुविधा है | बस दोनो परिवार मिलकर शादी कर दो |

रितेश किस मुँहसे दामाद को बताता कि मीनल ने दबाव बनाया हुआ है, पहली शादी वो भी लड़की की कुछ भी करो कर्जा लो लेकिन शादी में मुझे ढेर सा सामान और गहने चाहिए | ससुराल वालों को क्या मुंह दिखाऊंगी, ससुराल मे मेरी नाक कट जाएगी |

इन्दु सिन्हा"इन्दु"

अशोक तिवारी

बारिश का एहसास हुआ है बहुत दिनों के बाद
इतनी होड़ लगी जीवन में खोने पाने की
फ़ुरसत नहीं मिली अब तक ख़ुद से बतियाने की,
जाने कितनी ऋतुयें बदली जान नहीं पाये
कब सुबह से शाम हुई पहचान नहीं पाये
आज थक गया तन तब मन की चेतनता जागी
जीने का विश्वास हुआ है बहुत दिनों के बाद।।

लघुकथा

ना जाने कौन सी खिड़की खुली थी

ब्रजेश श्रीवास्तव

अमूमन सुबह थोडी जल्दी नींद खुल जाती है पर उस दिन छुट्टी थी इसलिये सुबह थोडी देर से सोकर उठे। बालकनी मे आये तो देखा आसमान मे काले बादल छाये थे और बहुत अच्छी हवा भी चल रही थी। हल्की बरसात के आसार थे। मौसम बहुत ही खुशनुमा था तो सोचा छत पर चलकर मौसम का आनन्द लिया जाय।

छत पर जाने के लिये अभी दो-तीन सीढिया ही चढ़े थे कि अगली सीढियों पर अजब ही मंजर दिखा। देखकर मन विचलित हो गया और पांव अपने आप ठिठक कर रुक गये , आगे जाने की हिम्मत नही पड़ी। मौसम का आनन्द लेने की बात तो ना जाने कहां काफूर हो गयी। मन कुछ महीने पहले की बातों को सोचने पर विवश हो गया।

अभी कुछ महीनो पहले की ही तो बात है। मैं छत पर बैठा था। मैने देखा कि कबूतरों का एक जोड़ा चोंच मे कुछ पतले सूखे डंठल लिये आता हैं और छत पर जीने के पास बने अलमारी के ऊपरी हिस्से मे लाकर रख देता हैं। यही प्रक्रिया दिन भर चलता रहता है। समझ मे आ गया कि उसे किसी सुरक्षित जगह की तलाश है अपने नये घोंसले के लिये।

कबूतरों के बारे मे ऐसा कहा जाता है कि उन्हे घोंसला बनाना नही आता। जिस तरह अन्य पक्षी अपने लिये बहुत सुन्दर और विभिन्न तरह के घोंसले बना लेते हैं कबूतर ऐसा नही कर पाते , इसीलिये शायद कबूतरों के घोंसले किसी पेड़ पर नही पाये जाते क्योंकि पेड़ के डालियों और टहनियों की उन्हे अच्छी परख नही रहती और ऐसे घोंसले नही बना पाते जिसमे उनके अंडे सुरक्षित रहें और गिर कर टूटने ना पायें। इसीलिये कबूतर प्राय : अपने घोंसले घरों के झरोखों , ताखों या अलमारियों पर बना लेते हैं जिससे वो मजबूत सतह पा जाएं और उनके अंडे गिर कर ना टूट जांय।

अपने लिये घोंसला वो सुरक्षित जगह ही बनाते होंगे पर इस बार कुछ ज्यादा ही सुरक्षा की जरूरत होगी। किसलिए इतनी सुरक्षा की तलाश थी इसका आभास भी मुझे हो गया। मैने भी कोई रुकावट नही पैदा की और पूरी प्रक्रिया देखता रहा घोंसला बनने की। थोड़े ही दिनो मे एक मजबूत पर बेतरतीब सा घोंसला तैयार हो गया। कबूतरों के घोंसले मजबूत पर सामान्य ही होते हैं। घोसला केवल निचले तल का ही था ऊपर से पूरा खुला हुआ पर मजबूती मे कोई कमी नही लग रही थी। घोसले का सम्पूर्ण रूप देखते ही तारीफ करने को जी चाहा पर भाषा आड़े आ गयी।

अक्सर मैं देखता दोनो को उसी घोंसले पर बैठे हुये । मैं उन्हे देखता , वो भी मुझे देखते पर थोड़ा डरे और सहमे से। एक बार मैने यूं ही घोंसले को छूने की कोशिस की तो डर कर सहम गये। मैने भी हाथ पीछे खींच लिया। पर अक्सर छत पर आना जाना होता था और आते जाते मैं उनकी तरफ देख भी लेता था तो शायद उन दोनो की आंखों मे मेरी पहचान बन गयी और धीरे धीरे उनका डर खत्म हो गया। उन्हे मुझसे कोई डर नही दिखा। एक दिन यूं ही एक बार फिर मैने अपना हाथ बढाया उनकी तरफ तो इस बार वो नही डरे। मैने भी उन पर हल्का सा हाथ फेरकर अपना हाथ हटा लिया। शायद सुकून की अनुभूति दोनो तरफ थी, ऐसा मुझे आभास हुआ।

कुछ दिन बाद मैने देखा दोनो किसी चीज को घेरकर बैठे हैं शायद इस प्रयास मे हों कि कोई उस चीज को देख ना ले। मुझे थोडी उत्सुकता हुई तो थोड़ा उचक कर देखा। दोनो ने अपने शरीर और पंखों से दो या तीन अंडों को छिपा रखा था। मैने भी उन्हे परेशान नही किया , चुपचाप वहां से चला आया।

फिर कुछ दिन बाद वो समय भी आया जिसका उन दोनो को इन्तजार रहा होगा। मैने देखा दो छोटे छोटे बच्चे चीं-चीं , चीं-चीं की आवाज कर रहे थे। दोनो अपने अपने चोंचों से बच्चों के मुह मे कुछ दाने डाल रहे थे। मैने भी कुछ अनाज के दाने और एक कटोरी मे कुछ पानी वहीं रख दिया। बच्चे अभी बहुत ही छोटे और कमजोर थे इसलिये उन्हे छूने की जिज्ञासा को मैने अपने मन ही शान्त कर लिया। मैने सोचा की उनके व्यक्तिगत जीवन मे ज्यादा व्यवधान ना डाला जाय इसलिये आते जाते देख तो लेता था पर रुक कर उन पर नजर रखना, ध्यान से देखना या छूना उचित नही लगा।

समय बीतता रहा। पूरे परिवार को उन कबूतर के जोड़ों और उनके बच्चों से लगाव

हो चुका था। धीरे धीरे बच्चे बड़े हो रहे थे। उनके पंख बड़े हो रहे थे। पंखों पर काला सफेद मिश्रित रंग भी आने लगा था। सब कुछ सामान्य चल रहा था। बच्चों के पंख मजबूत हुए। फिर कुछ और दिन बीते और एक दिन बच्चों को उड़ना भी आ गया।

आज छत पर जाते समय और पूरा मंजर देख कुछ दिंन पहले की ये पूरी बात मेरे दिमाग मे कुछ पल के घूम गयी। मन पूरी तरह से विचलित हो चुका था। मौसम का आनन्द लेने की बात तो जाने कहां चली गयी।

अगली सीढ़ी पर ही कबूतरों का एक बच्चा खून से लथ-पथ मृत पड़ा था। बिखरे और टूटे हुये पंख एक भीषण संघर्ष का संकेत दे रहे थे जो उसने जान बचाने के लिये किया होगा। थोडा और ऊपर चढ़ा तो सन्न रह गया। कबूतरों का दूसरा बच्चा भी बिल्कुल उसी हालत मे मृत पड़ा था। आस-पास खून बिखरा हुआ था। दुखी मन से थोडा और आगे बढा तो आंखों मे आंसू आ गये। जोड़ों मे से एक सदस्य शायद कबूतरी थी , अलमारी के ठीक नीचे फर्श पर खून से लथ-पथ मृत पड़ी थी। यहां भी टूटे और बिखरे पंख एक संघर्ष की गाथा लिख रहे थे जो उसने खुद के और बच्चों की जान बचाने के लिए किया होगा।

बहुत ही हिम्मत करके मैने अपनी नजर धीरे धीरे ऊपर घोंसले की तरफ उठायी तो चकित रह गया। उस कबूतर परिवार का मुख्य सदस्य कबूतर घोंसले के पास ही खून से सना हुआ लेकिन जीवित अवस्था मे एक टक नीचे पड़े हुये मृत सदस्यों को बदहवास निहारे जा रहा था। उसके भी बिखरे पंख एक भीषण संघर्ष की गवाही दे रहे रहे थे जो उसे अपने कुनबे को बचाने के लिये किया होगा। कल्पना से परे थी उसकी पूरी मनोदशा।

थोड़ा नजर इधर-उधर दौड़ाया तो पास मे ही बिल्ली के कुछ बाल मिले। फिर तो पूरी घटना का आभास हो गया। वैसे तो बिल्लियों का आना जाना घर मे कम ही होता है पर शायद रात मे किसी रास्ते कोई बिल्ली आयी होगी। यह भी सम्भव है कि कई दिनो से वो मौके की ताक मे रही हो। देर रात घर मे सभी सो गये तो वो आयी हो और पूरे घटनाक्रम को अंजाम दिया हो। अच्छा खासा संघर्ष हुआ हो। पर ताकतवर बिल्ली के आगे सारे कबूतर संघर्ष के अतिरिक्त कुछ ना कर पायें हों। कुछ आहट होने पर एक कबूतर को जीवित छोड़कर बिल्ली भाग गयी हो।

अब जो कुछ भी हुआ हो पर जो हो गया उसकी भरपाई सम्भव नही थी। जीवित बचे कबूतर पर हाथ रखा तो वो थोड़ा सिमट गया। बहुत अधिक डरा हुआ था। उसे नीचे उतारा और बाहर बालकनी मे रख दिया। थोड़ी देर के लिये वहीं छोड़ दिया उसे कुछ सामान्य होने के लिये। धीरे धीरे वो सामान्य हो रहा था। पैरों से थोडी चहल कदमी भी करने लगा। मैने उसके सामने अनाज के कुछ दाने और एक कटोरी पानी रख दिया पर उसने कुछ नही खाया। मैने सोचा उसे थोडी देर अकेला छोड़ दिया जाय तो मैं वहां से हट गया। थोडी देर बाद आकर देखा तो कबूतर वहां से जा चुका था।

तीनो मृत कबूतरों को बेहद दुखी हृदय से मैं एक तालाब पर रख आया। पूरी घटना का दुख कई दिनो तक बना रहा। दुख के साथ साथ एक अपराध बोध भी था। अब जब भी मैं छत पर जाता हूं तो ना चाहते हुये भी नजर अलमारी के उस हिस्से पर पड़ ही जाती है जहां उनका घोंसला था। थोड़ी देर के लिये मन असहज हो जाता है।

कई बार सोचा कि इस संस्मरण या लघुकथा को दुखांत ना रखें। पर सुखान्त होने की कोई गुंजाइश नही थी। दुख भी मानवीय अनुभूतियों का महत्वपूर्ण अंग है। संवेदनाओं मे संतुलन बना रहे इसलिये जीवन मे सुख और दुख दोनो की अनुभूति होती रहनी चाहिये। आवश्यक नही है कि कोई घटना अपने पर ही बल्कि किसी भी जीव पर हो दुख की अनुभूति तो होनी ही चाहिये पर मुझे दुख के साथ एक अपराध बोध भी है।

लेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं उनसे संपादक मण्डल या संपर्क भाषा भारती पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय-क्षेत्र नई दिल्ली रहेगा। प्रकाशक तथा संपादक : सुधेन्दु ओझा, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली110092

प्यारी माँ
श्रीमती सुधा कुमारी

शोक सन्देश

बड़े दुख के साथ सूचित किया जाता है कि श्रीमती सुधा कुमारी आर्य (धर्म पत्नी स्वर्गीय श्री सुरेंद्र कुमार शास्त्री जी जो कि वेदों एवं व्याकरण के आचार्य थे) का १३/७/२२ को ९३ वर्ष की आयु मे निधन हो गया है।

वह बहुत ही प्रतिभावान सुसंस्कृत, समाज सेवी, उदारहृदय, भव्य व कांतिमई व्यक्तित्व की महिला थी। उन्होंने भारत के सर्वश्रेष्ठ आर्य समाज दीवान हॉल से जुड़कर वर्षों तक मंत्रानी पद पर कार्य करते हुए बहुत से महत्वपूर्ण समाज सेवा कार्य किए। उन्होंने आर्य समाज के प्रचार प्रसार में अपना संपूर्ण जीवन अर्पण कर दिया। वह इसी प्रचार-प्रसार हेतु मॉरीशस भी गयीं। उन्होंने अपने परिवार, कुटुंब व समाज के सभी बच्चों को शिक्षित कर आर्य समाजी विचारधारा से पोषित किया। आज वह अपने उच्च व्यक्तित्व के कारण अमर हैं। हम सब उनकी दिवंगत आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना करते हैं।

सुधीर गुप्ता
गुप्ता प्रॉपर्टी कंसलटेंट
7-B, ग्राउंड फ्लोर, नेताजी सुभाष मार्ग,
दरियागंज, नयी दिल्ली-110002
मोब न 9971996000

वाचस्पति गुप्ता
गुप्ता प्रॉपर्टीज, शालीमार बाग़, दिल्ली
मोब न 9968220976

लघुकथा

ज़िंदा मैं

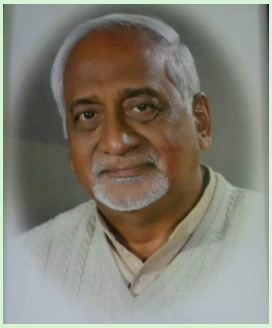

□ अशोक जैन

कई हफ्तों के बाद आज वे फिर मिले। दोनों भरे थे, पर चुप!
बात वहीं से शुरू हुई जहाँ से हर बार शुरू होती रही है।
छुटका आज मानसिक रूप से तैयार होकर आया था।
" कहाँ रहे इतने दिन?" बड़के ने प्रश्न किया।
" यहीं। " संक्षिप्त सा उत्तर छुटके का।
"-- स्कूल का क्या रहा?"
" बंद कर दिया।"
" क्यों?" बड़के ने अपनी निगाहें उसके चेहरे पर गड़ा दीं।
" आपस में कान्फ्लिकट्स हो गये थे, फिर एडमिनिस्ट्रेशन का नोटिस---।"
" नोटिस वोटिस में बहलाने की कोशिश मत करो। तुम्हारे काम करने का ऑपरेशन ही ग़लत है ; सफलता मिले कहाँ से?"
छुटका चुप रहा।
" तुम्हारी असफलता का कारण है तुम्हारा ग़लत क्लैरिफिकेशन-- तुम्हारी अपनी कमज़ोरी---।"
" क्या मैं नहीं चाहता सैट होना!" छुटके ने थोड़ा कठोर होने का प्रयास किया।
" पिछले चार वर्षों में तुमने अपने करियर में क्या जोड़ा? तुम्हारी चाह से ही रास्ते नहीं खुल जायेंगे!"
फिर थोड़ी देर ख़ामोशी छाई रही। भाभी चाय रख गयी थी। बड़का चाय को सिप करने लगा था।
" रोटी तो कुत्ता भी खा लेता है। जितना तुम ट्यूशनें करके कमाते हो उतना तो एक पानी की टंकी धकेलने वाला भी कमा लेता है। फिर तुम---?" छुटके को कड़वाहट झेलते देख बड़का बोलता रहा।
" शायद आपने कुछ प्रूफ पढ़ने के लिए बुलाया था--।" छुटके ने विषय पर आते हुए कहा।
" पहले अपने आपको मानसिक रूप से तैयार करो, फिर आना। जिंदगी में कुत्ते की तरह रोटी खाना ही ध्येय--।" बड़का निरंतर मन की बातें उगलता रहा-तभी ध्यान दूसरे भरे प्याले की ओर गया।
" चाय पिओ!" बड़के ने भरा प्याला उसकी ओर सरकाते हुए कहा।
छुटके का ध्यान उस ओर न था, वह खामोश कुछ सोच रहा था। उसे चुप देख बड़के ने दुबारा कहा:
" पियो न!" उसके स्वर में तल्खी थी।
" नहीं, मैं इसके लिए मानसिक रूप से तैयार नहीं हूँ। " छुटके ने दृढ़ता से कहा।
वह उठा और उसके कदम दरवाजे की दहलीज लांघ गये। □

क्या बयान करूँ?

सब तरफ ख़ामोशी का आलम,
दास्तान क्या बयान करूँ ?
लबों के संग दिल भी ख़ामोश है
दास्तान क्या बयान करूँ?

न जाने कब से सूखे अश्क
गालों पर अपना पता बता देते हैं,
ख़ुश्क आँखों, काँपती पलकों की
दास्तान क्या बयान करूँ ?

भूली-बिसरी यादों की पगडंडियाँ
दिल में ख़्वाब सजाये बैठी हैं,
मंज़िल तक न जा सकने की उनकी
दास्तान क्या बयान करूँ?

क्या लिखूँ ? शायद यह कलाम उनको
आख़िरी सलाम है मेरा,
उजड़े दामन की सिलवटों की
दास्तान क्या बयान करूँ?

बहुत चाहा पर रोका दिल को
मन में उनकी तस्वीर बसाने से
मन की चाहत में उलझे दिल की
दास्तान क्या बयान करूँ?

शील निगम

आम फलों का राजा

आम फलों का राजा,
बस मुंह में तू आजा।
मीठा ताज़ा लाओ,
काट-चूसकर खाओ,
लंगड़ा दशहरी चौसा,
एक-दूसरे के मौसा।
बस बगीचा जाने में
मजा आता खाने में।
आम देख ललचाता,
बच्चों को यह भाता।

दुःख-सुख

जब बोर हो जाओ,
तब घूमो नाचो गाओ।

जीवन में करो जंपिंग,
होगी खून की पंपिंग।

बच्चों खेल-कूद जरूरी,
इससे नहीं रखना दूरी।

जीवन का यह हिस्सा,
दुःख-सुख का किस्सा।

- सूर्यदीप कुशवाहा

.....

डॉ.मनोहर अभय

बिटवा

ढाह मार दीवारें रोईं
गुमसुम दिहरी द्वार
जिस दिन तुमने छोड़ा
ये दुखिया घरबार

दिन पहाड़ से काटे
जंगल जैसी रात
बिटवा |

गए
संग ले जाते
खट्टी- मीठी यादें
सपन तुम्हारे बोलो
और कहाँ तक लादें
बूढ़ी- बाढ़ी सँझा को
मार गए तुम लात

बिटवा |

रूखा-सूखा
जैसा भी था
संग बैठ कर खाते
दर्द बुढ़ौती का
फूलों से सहलाते
टूटे टखने
पोर- पोर दुखियात
बिटवा |

तुम्हें बहुत जल्दी थी
बैठो ऊँची कुर्सी
चिलम नहीं भरना
औ' साहब की फरसी
धुले तुम्हारे रहें सदा
कागज कलम दवात
बिटवा |

कितना सूखेंगे

थक कर बैठे यक्ष प्रश्न
गंदली सुबह में
और कितना पूछेंगे
पेट इश्क में डूबा है
बेहया पीठ के
शर्म लाज सब छोड़ छाड़ कर
सटा हुआ है
बिगड़े हुए प्रेमियों को
परवाह नहीं है
प्यार किया तो डरना क्या
ये रटा हुआ है
सूख रहा है हलक
उलझ कर नई वजह में
और कितना थूकेंगे
बहुत भला है बेजुबान
मलमल का टुकड़ा
जीने मरने दोनों में ही
काम आता है
हरी मूँज की रस्सी भी
मुँह लगी बहुत है
पेट पीठ दोनों से ही
गहरा नाता है
दोनों ही बेझिझक
फँस गये नई गिरह में
भला कब तक चूकेंगे
फटी हुई बेवाई ने भी
सीख लिया है
कैसे लेकर गहरी साँस
जिया जाता है
बहुत सताया रोटी ने
पर मजबूरी है
संकट में उसका ही
नाम लिया जाता है

हँस कर बोला काँस
बाँस से पड़े विरह में
और कितना सूखेंगे

सूर्य प्रकाश मिश्र

1

विश्वास आधार है जीवन का

मजनू बहुत देर तक जिंदा रहा ,

कितने ही पत्थर खाए,

उसे यकीन था लैला उससे प्यार करती है,

विश्वास आधार है जीवन का ,

अमृत है खुशियों का

विश्वास है तो जीवन है।

मीरा कई वर्ष तक कृष्ण की इंतजार में रही,

उसे विश्वास था एक दिन वह जरूर आएंगे ,

उसे अपने साथ ले जाएंगे ,

विश्वास बहुत बड़ा आधार है जीवन का।

शबरी अनेक कष्टों के बाद भी गुरु के आश्रम में रही,

उसे विश्वास था राम एक दिन आएंगे,

आप जानते हैं राम एक दिन आए थे,

उन्होंने शबरी के जूठे बेर भी खाए थे,

सच में विश्वास बहुत बड़ा आधार है जीवन का।

सविता चड्ढा

(2)

पेंचर हुए टायर में

हवा भरते देखने की साक्षी

बचपन में रह चुकी हूँ

इसलिए आजतक ,

किसी के नुकीले शब्द

किसी की बेवजह घूरती निगाहें

बेवजह के ठहाके और रुदन भी

मेरा आत्मबल - मनोबल नहीं गिरा सके

(3)

कभी उदास मत होना

बीहड़ पहाड़ों में, सुलगते अंगारों में,

अंधियारी रातों में, बीत गयी बातों में,

निर्जन वन में, दुर्जन के संग में,

अपनों के रंग में, दुख में सुख में,

शांति में सन्नाटे में,शोर शराबे में,

जल में ,थल में, चल और अचल में,

धूप चाहे छांव में, शीर्ष चाहे पांव में,

किसी भी रंग में,/उदास मत होना ,

चाहे कुछ भी हो जाये, कभी निराश मत होना,

दुख में भी मुस्कुराते रहने से,

असंभव नही रहता जीवन,

उस पार जाने से पहले।

सविता चड्ढा

शायद

******

शायद..
उन ओस की बूंदों को
मैंने भी महसूसा होता
जो रात भर गिरते रहे
उन सुकोमल पुष्पों पर
झिर-झिर कर

शायद...
मेरी हथेलियां भी
भर-भर जातीं
मोतियों की सौगात से

शायद..
उस ताप और ऊष्मा को भी
जो दे जाते हैं गर्माहट
और कर जाते हैं
उन सुनहरी फसलों को
उन्मुक्तता से लबरेज

शायद...
चांदनी की लावण्यता से
परिपूर्ण वह कुमुदिनी
या रजनीगंधा उन्मत्त
अपनी मदहोशी में

शायद..
सूर्य को अपलक, निरंतर
निहारने वाली सूर्यमुखी
लालायित निष्प्राण
स्वयं उत्सर्ग होने को

शायद...
उस सुर लय ताल में
जो अटूट अविरल
बहती आ रही है
छन-छन कर
सदियों से

शायद...
घटाओं की मद्धिम
रिमझिम झिमझिम झमझम
छुमछुम छमछम छंद
मेघराग के

शायद..
यह पर्याप्त हो
स्वीकारने के लिए
उस अनुबंध को
जिसे हम प्रेम कहते हैं

डॉ शिप्रा मिश्रा

रामानुज अनुज

एक

डोरबेल दो बार घनघना चुकी थी। लक्ष्मी पहली आवाज सुनकर चल पड़ी थी। साठ के ऊपर की वय, उस पर घुटनों में दर्द लिए कितना तेज भागे। आगंतुक से सब्र नहीं हुआ, दोबारा से बजा दी। द्वार खोल कर बाहर देखा, दो व्यक्ति ऊलजलूल पहनावे में खड़े थे। दोनों कुर्ता और पैंट पहने थे। हाँ, शरीर का और कुर्ते का रंग अलग-अलग था। एक सफेद रंग का दूसरा नीले रंग का चेकदार कुर्ता पहने था। दोनों ने दाढ़ी बढ़ा रखी थी। देखने में वे सर्कस के जोकर जैसे लग रहे थे। लक्ष्मी को देखते ही बिना लागलपेट और औपचारिकता के पूछ बैठे, 'केडी साहब यहीं रहते हैं?'

बिना देरी के लक्ष्मी ने भी कह दिया, 'नहीं।' और भड़ाक से द्वार बन्द कर लिया। फिर दरवाजे से कान सटाकर उन अजनबियों की बातें सुनने लगी, 'चौकीदार ने एड्रेस तो यहीं का दिया था। फिर-----?'

'मोबाइल तो रखता होगा वह?'

'जरूर, बुढ़िया से नम्बर लेते हैं।'

'दिमाक खराब है तुम्हारा, जब वो कहती है कि यहाँ नहीं रहता तब किसका नम्बर लोगे?'

'मेरा ख्याल है वह झूठ बोलती है।'

'और मेरा ख्याल है कि वह सच बोल रही है।'

'साले ने नेम प्लेट भी नहीं लगवाया।'

'लगवा लेगा, अभी नया-नया आया है। क्या-क्या कर ले।'

'मिलना जरूरी है।'

'कल हम ऑफिस चलकर बात करेंगे। सोचे थे आज सन्डे है, घर में मिल जायेगा तो साफ-साफ बात हो जायेगी।'

'करोडों का मामला है गुरू, हाथ से नहीं जाना चाहिए।'

'नहीं जायेगा मेरे भाई, मेरे तजुर्बे पर भरोसा करो।'

'न माना तो?'

'मुझे मनवाना आता है।'

'यहाँ से चलो अब, किसी होटल में बैठकर चाय -पानी करते हुए बात करेंगे।'

'ऐसी मूर्खता मत करना, गोपनीय बातें सब जगह नहीं की जाती हैं, ध्यान रहे।'

'वैसे देखने में कैसा दिखता है।'

'तुम भी कमाल करते हो, आदमी की तरह ही होगा और लोकसेवा से चयन हुआ है तो निश्चित ही कुछ टेलेंट होगा। पूरा का पूरा घूस देकर तो सलेक्ट न हुआ होगा।'

उन्हें जाते हुए देखकर लक्ष्मी लौटकर बिस्तर में आकर बैठ गई और घुटने को सहलाने लगी। लक्ष्मी पिछले महीने हमेशा के लिए रहने यहाँ आ गई है।लेकिन अपनी मर्जी से नहीं, लड़का और बहू के जोर देने पर गाँव का कच्चा मकान और उससे लगी तीन एकड़ खेती वाली जमीन मात्र तीस लाख में बेचकर बेसहारा हो गई है। अब बेटा-बहू के साथ न रहे तो कहाँ रहे?

उस दिन वह बिक्री पत्र में अंगूठा लगाते हुए रो पड़ी थी, जब पंजीयक पूछे थे, 'जमीन क्यों बेच रही हो अम्मा?'
'का करी।' वह इतना कहकर धम्म से जमीन पर बैठ गई थी।'
'दसकत मारा काकी, पइसबा त पटि चुका है। अब अउठा लगाबय म काहे का नाटक।'
खुद को सम्हालते हुए वह दोबारा से उठी और अँगूठा लगाकर बाहर आ गई थी।
यहाँ उसे अच्छा नहीं लगता है। वह बाहर निकलकर किसी से बोल-बता नहीं सकती। बहुत इच्छा होती है कि इस घर से वह बाहर निकले, ठेले वाले के पास जाकर सब्जी खरीद लाए, आलू, टमाटर और भाजी के भाव पता करे। किराने वाले से गुड़ तेल, धनिया मिर्ची अच्छी तरह से देख-ताक कर, मोलभाव कर खरीदे, परंतु नहीं जा सकती, बहू की सख्त हिदायत है कि वह कहीं न जाए, उसे लोगों से बात करने का तरीका नहीं है, हमारी बदनामी होगी। कैसे बदनामी होगी? उनसे ऐसा क्या कह देगी कि इनकी बदनामी होगी? क्या वे मुझे अपने से अलग समझते हैं? मैंने तो अपनी सास को कभी नहीं रोका कि आप बाहर मत जाओ, लोगों से मिलो-जुलो नहीं। कैसा जुग आ गया है। पहले के समय में बड़े अपने से छोटों को समझाइस देते थे, अच्छे-बुरे की पहचान बताते थे। बहू-बेटियों को कुल-समाज की, रीति-रिवाजों की घर की सयानी औरतें सीख देती थीं। और अब नई पीढ़ी को सयाने लोग पागल लगते हैं। इनके तजुर्बे और हुनर उनके हिसाब से नाकाबिल हो गए हैं। एक दिन उसने बहू से इतना ही कहा था, 'पायल-बिछुआ, चूड़ियाँ नहीं पहनती हो, सिंदूर भी नहीं लगाती हों। सुहागन को इन वस्तुओं का इस्तेमाल करना जरूरी होता है।'
बिना आगे-पीछे वह तमककर बोली थी, 'तो आप तय करेंगी के मैं क्या पहनूँ?' फिर हिदायत देकर बोली थी, 'मुझे टोका-टाकी पसंद नहीं है। यह मेरी जिंदगी है, अपने तरीके से जिऊँगी।'

उसका मन हुआ था कि उन दढ़िअलों का नाम, पता पूछे, किस काम के लिए केडी को ढूढ़ते हो? केडी कौन है? लेकिन नहीं, वे अच्छे लोग नहीं लगे और ऊपर से उनका पहिनावा। उसे हँसी उठ आई, 'ऐसे कपड़े तो गाँव में कोई नहीं पहनता है। कुर्ता के साथ पजामा या परदनी (धोती) का जोड़ा बनता है। तिस पर यदि कंधे पर अंगोछी या उपन्ना हो और माथे पर तिलक लगा हो तो वह आदमी सभ्य और सुसंस्कार वाला समझा जाता है।'

छुट्टी का दिन है, बेटा-बहू, जरूरी काम बताकर घर से बाहर गए हुए हैं।

जब लगे वर्तमान अपना मूल्य खो रहा है या उस दोराहे पर आकर रुका हुआ है जहाँ से उसे भविष्य में या भूत में रूपायित होना था। तब गुजरे हुए पल बहुत सुकून देते हैं। दुखती रगों को छूकर कहते हैं, 'दुख करने की जरूरत नहीं, हम साथ हैं। भले नए नजरिए से हम गोबर हैं, किंतु खाद के गुण अभी वैसे के वैसे हैं, मिट्टी के रंग बदलने की कुब्बत अभी हममें है।'

जब लगे वर्तमान अपना मूल्य खो रहा है या उस दोराहे पर आकर रुका हुआ है जहाँ से उसे भविष्य में या भूत में रूपायित होना था। तब गुजरे हुए पल बहुत सुकून देते हैं। दुखती रगों को छूकर कहते हैं, 'दुख करने की जरूरत नहीं, हम साथ हैं। भले नए नजरिए से हम गोबर हैं, किंतु खाद के गुण अभी वैसे के वैसे हैं, मिट्टी के रंग बदलने की कुब्बत अभी हममें है।'

परन्तु, बीते पल समय काटने और खुद का मनोरंजन करने के अलावा किसी काम के नहीं होते हैं। जो चला गया सो चला गया, वह अतीत की कहानी का हिस्सा हो गया। भविष्य की बुनियाद तो वर्तमान की जमीन पर खड़ी की जाती है। अतीत, भले किसी काम का न हो उसे भुलाना भी सहज नहीं होता है। लक्ष्मी के आँखों के सामने वे पल सजीव होकर बोलने लगे, जो कभी उसके अपने थे, जिनके साथ वह सोई-जागी थी।

उस साल बारिश की बूंदें नाग देवता को दूध पिलाने के साथ धरती से आकाश चली गईं थीं। साठ-सत्तर का दसक, उस समय धान की खेती कम होती थी। मोटे अनाज, ज्वार, बाजरा, मकई, की खेती अधिक होती थी। उस समय की खेती बादलों पर पूरी तरह से निर्भर थी, सिंचाई के संसाधन विकसित नहीं थे। सुकुमारी धान बिना पानी के कब तक जिए, पंद्रह दिन तड़फने के बाद पीली होकर मर गयी, किन्तु ज्वार, बाजरे ने सूखे से जमकर लड़ाई लड़ी। कहते हैं, मोटे अन्न आकाश से झरती शीत पीकर जीवित रहते हैं और किसान को भूखा नहीं रहने देते।

देवउठनी एकादशी होते ही ज्वार के सीधे खड़े दुबले-पतले पौधों पर हँसते हुए भुट्टे निकल आए, जैसे अपनी विजय का एलान कर रहे हों। किसन के पिता बहुत खुश हुए थे। खेत दिखाकर कहने लगे, 'देखो लछमी, तुम्हारे भाग से हमें किसी की मजदूरी नहीं करनी पड़ेगी, किसी से कर्ज नहीं लेना पड़ेगा। वो देखो, ज्वार का भुट्टा कैसे हँस रहा है। नाम जानती हो उसका?'
'नहीं?' उसने अनभिज्ञता जाहिर की थी।
'वो उमानी है, अत्यंत नाजुक मिजाज का है, उंगलियों की छुअन तक उसे सहन नहीं है, झर पड़ेगा।'
'और वो?' बूढ़े साधु की स्वेत लटों में अनारदाने की तरह विखरी मुखाकृति देखकर वह पूछ ली थी।
'झलरी कहते हैं उसे। पकने के बाद उसे भूनना, फिर मुलायम फूटे को गुड़ के साथ स्वाद से खाना, देखना बहुत आनन्द आयेगा।'

कभी भी कैसा भी समय पड़ा, उस जमीन ने किसी के आगे झुकने नहीं दिया। किसन, आज तुम्हारे पिता जीवित होते तो न वह कच्चा मकान बिकने देते न खेती की जमीन को, न मुझे कहीं जाने देते। तुम भूल रहे हो, उसी जमीन ने तुम्हें पढ़ाया लिखाया और अफसर बनाया है। उस धरती का तुम्हें ताजिंदगी ऋणी होना चाहिए था, कृतज्ञ होना चाहिए था, किन्तु पत्नी के दवाब में आकर पुस्तैनी जमीन बेचने के लिए मजबूर कर दिए? यहाँ क्या है, जिसे अपना कह सकूँ। पवन-पानी तक अचीन्हा है। त्यौहार-तिथि तो जैसे भूल गए हैं। सावन-भादों के महीने त्योहारों के होते थे, खुशियों के, एक-

दूसरे से मिलने के दिन होते थे। मुझे सभी महीनों के नाम याद थे। तिथि-नखत तक याद थे। भादों महीने में जब बरखा की झड़ी लगती थी, तब किसन के पिता कहते थे, यह 'मघा ' का पानी है। 'मघा के बरसे माँ के परसे।'
मैं पूछती इसका क्या अर्थ हुआ, वे बताते---
'जिस तरह से माँ के भोजन परोसने से पुत्र की क्षुधा शांत होती है, उसी तरह मघा नक्षत्र में जलवृष्टि होने पर धरती तृप्त होती है। उसकी प्यास मिटती है और खेतों में फसल अच्छी होती है।'

बाहर शोर सुनकर लक्ष्मी के यादों की लड़ी टूट गई, मनके विखर गये, वह खिड़की से पर्दा खिसकाकर बाहर झाँकने लगी, वजह कुछ नहीं, गली में खड़ी कार में किसी ने पत्थर फेंककर शीशे तोड़ दिए थे। उसी को लेकर सभी अपनी-अपनी राय जाहिर कर रहे थे। स्वर हो या सुर हो जब समूह में बेतरतीब उठते हैं तब वे स्वयं अपना गुण खोकर एक-दूसरे के टकराकर शोर में तब्दील हो जाते हैं, श्रवण योग्य नहीं रह जाते हैं। जैसे आजकल शादी-व्याह में या अन्य अवसरों पर बजने वाले बैंड बाजे और उस पर कूदती लड़कियों के साथ लड़के। कितना फूहड़पन आ गया है, खुशियों की अभिव्यक्ति में। प्रसन्न्ता जाहिर करने के और बहुत से प्रचलित तरीके समाज में आदि काल से रहे हैं। व्याह के समय के, तिथि-त्योहारों के और ऋतुओं में गाए जाने वाले गीत और लय-ताल से घुँघरू बाँधे पैरों की यति-गति की थिरकन का मुकाबला मेढ़क की तरह उछलते-कूदते पाँव कभी नहीं कर सकते हैं। एक जमाना था जब शहनाई और पखावज की जुगलबंदी सुनकर राजघराना सोता था और भोर में शहनाई और नगाड़े की संगति से निःसृत राग भैरव सुनकर जागता था।

यादों की विस्तृत दुनिया से तादात्म्य टूट गया, फिर से डोर वेल बजने लगी थी। द्वार खोलने के लिए लक्ष्मी दीवारों का सहारा लेकर चल पड़ी। बेटा और बहू आ गए थे। द्वार खुलते ही वे भीतर आए। किसन के हाथ में एक वजनी पैकेट था, एक कोने में फेंककर सोफे में पसर गया। पंखे की गति बढ़ाती हुए नयन भी सोफे के दूसरे छोर पर धँस गयी।

'पानी लाऊँ।' खड़ी हुई लक्ष्मी ने पूछा।
'नहीं अम्मा, पसीना सूख जाए फिर पी लूँगा।'
'मुझे चाहिए।' नयन बोली।

बहू का नाम नयन है, सुंदर नाम है। मन भी सुंदर हो तब नाम की सार्थकता है। गुलाब नाम रख देने से कोई गुलाब नहीं हो जाता है। गुलाब के गुणों को निज मन में समाहित करना होता है। चाल-चलन और व्यवहार के सुवास से आसपास के वातावरण को महकाना होता है, तभी गुलाब नाम सार्थक होता है।

'हुँह, पानी से अजीब-सी गन्ध आ रही है।'
एक घूँट जल हलक के नीचे उतारकर नयन गिलास को दूर रख दी।

बहू का नाम नयन है, सुंदर नाम है। मन भी सुंदर हो तब नाम की सार्थकता है। गुलाब नाम रख देने से कोई गुलाब नहीं हो जाता है। गुलाब के गुणों को निज मन में समाहित करना होता है। चाल-चलन और व्यवहार के सुवास से आसपास के वातावरण को महकाना होता है, तभी गुलाब नाम सार्थक होता है।

'मटके से पानी लाई होगी, अम्मा!'
'नया है, कुछ दिन ता माटी के महक देबय करी।'
'गोबर-माटी आप सूँघो, मुझे मटके का पानी नहीं पीना तो नहीं पीना।'

बहू के बोल लक्ष्मी के हृदय तक चोट किए, फिर भी वह पीड़ा को दबाए चुपचाप खड़ी रही। नयन भी नाराज मन से दूसरे कमरे में चली गई। कमरे में भी समस्या थी। स्विच दबाने के बाद सीलिंग फैन सू-सू, गों-गों की आवाज के साथ थोड़ा घूमा फिर शांत हो गया।

वह पाँव पटकती हुई फिर वहीं आ गई और तेज स्वर में बोली, 'ये कैसा बंगला है, इससे बेहतर तो किराए का घर होता है।'
'क्यों, क्या हुआ?'
'रूम का फैन नहीं चल रहा है।'
'ठीक हो जाएगा, मैं अभी मिस्त्री को फोन किए देता हूँ।'

नयन, फ्रिज से बोतल निकालकर पानी पी और शांत होकर बैठ गई। तभी लक्ष्मी ने उन आगंतुकों के विषय में बताया, 'बो केडी सर को पूछ रये थे।'
नयन, 'आपने क्या कहा?'
'मैंने कहा कि केडी यहाँ नहीं रहते।'
सुनकर नयन उखड़ गई, 'वो किसनदास को पूछते तो आप समझ लेतीं। अरे! किसनदास कोई नाम होता है, सुनने में किसी साधू-बैरागी के नाम जैसा लगता है। आप गाँव के लोग बिना सोचे-समझे बच्चों के नाम रख देते हैं। अनुमान नहीं करते कि आगे चलकर यही उल्टे -सीधे नाम उपहास के कारण बनेंगे।'

बेटे का किसनदास नाम उसे पसंद नहीं है, इतना तो वह समझ गई, लेकिन केडी कौन है? यह जान नहीं सकी। उसने कहा, 'ऊ केडी सर को पूछत थे।'
सोफे से उठते हुए नयन बोली, 'अम्मा! आज से आप भी जान लो, आपके बेटे किसनदास का ही सरकारी नाम केडी शर्मा है। इनके मातहत और परिचित इन्हें केडी सर कहते हैं। आगंतुक सही जगह आए थे। पता नहीं कौन थे, कहाँ से आए थे? इनसे उन्हें क्या काम था?'
'तुम किसी को घर आने को बोले थे क्या?' पति की तरफ नयन तरेर कर नयन पूछी।
'नहीं तो, मैं किसी से नहीं कहता कि घर आकर मिलो। ऑफिस का काम आफिस में होना चाहिए। घर तो निजी जिंदगी जीने और वर्तमान की आलोचनाओं के साथ भविष्य की तैयारी के लिए होता है।'
'ये सब नहीं जानती, रूम का फैन ठीक करने को किसी से बोलो और बाहर नेम प्लेट लगाओ।'

□□□

किसनदास, यही नाम स्कूल में लिखवाया गया था। नौकरी के पहले तक यही नाम रहा। नौकरी मिलते ही नाम क्यों बदल लिया? किसनदास

से केडी बनने की क्या जरूरत पड़ गई? ऐसे अनेक सवाल थे जिनके उत्तर तलाशती हुई लक्ष्मी अपने कमरे में बैठकर घुटने सहला रही थी। अब नेमप्लेट लगाने के लिए बहू ने कहा है, यह नेम प्लेट क्या होती है? कैसी होती है? कितनी बड़ी होती है? ज्यादा बड़ी होगी तो घर के भीतर कैसे आएगी? लक्ष्मी की हालत उस बच्चे की तरह थी जो शीघ्र ही संसार की हर वस्तु को देख लेना चाहता है और समझ लेना चाहता है। वह उठी और किचेन में जाकर चाय बनाने लगी। भला हुआ, जो किचेन की समझ आ गयी थी वरना यहाँ भी परेशानी जाती।
चाय लेकर वह भी बाहर के कमरे में आ गई। ठंड के दिनों में चाय ऐसा पेय है जिसे सब पसंद करते हैं। कप से सोंधी भाप उड़ती देखते ही नयन खुशामद करने लगी, 'अम्मा आप हमारे मन की बात कैसे जान लेती हैं? बैठे-बैठे अभी यही सोच रही थी।'
लक्ष्मी, 'माँ हूँ न, सब समझ लेती हूँ, बस एक बात समझ नहीं पाई?'
'वो क्या अम्मा?'
'बोई नेम प्लेट।'
नयन जोर से हँसी, लक्ष्मी को बुरा लग गया, लक्ष्मी भी चूकने वाली कहाँ, सुना दी, 'एमे हँसी की बात नहीं। कोई भी सभी चीजें नहीं जान सकता है। मैं जो जानती हूँ, तुम लोग नहीं जानते और तुम लोग जो जानते हो मैं नहीं जानती। एक दूसरे को बताना-सिखाना चाहिए।'
'ठीक कहती हो अम्मा, मैं बताता हूँ, एक चौकोर स्टील की पट्टी पर अंग्रेजी में केडी शर्मा तहसीलदार लिखा रहेगा, उसे पेंच के सहारे घर के बाहर लगाया जायेगा, ताकि बंगला ढूँढ़ने में किसी को परेशानी न हो।'
लक्ष्मी ने नाराजगी जाहिर की, 'ठीक है बनबाओ, पै केडी के नाम की नहीं चलेगी।'
'यही चलेगा अम्मा, केडी शर्मा ही लिखा रहेगा, किशनदास नहीं। जमाना कितना बदल गया लेकिन आपकी सोच नहीं बदली है। आज भी चिथड़े में लिपटे हुए आप खुश हो।' तेज आवाज में नयन बोली।
'यह नाम इसकी राशि से निकला है, इसे बदला नहीं जाता है। पट्टी में किसनदास लिखबाओ, तहसीलदार भी नहीं। बो तो है ही।'
'नहीं अम्मा, यदि नेमप्लेट बनी तो केडी शर्मा की बनेगी। आप बेटे का भला क्यों नहीं चाहती हैं? किसनदास से तहसीलदार का वो रुतबा नहीं बनता है जो केडी से बनता है।'

बात बेटे के रुतबे को लेकर थी, इसलिए लक्ष्मी, बुझे मन से मान गयी।
किसनदास, पत्नी और माँ की बातचीत से ऊब चले थे। वे बाहर निकलकर टहलने लगे। सिविल लाइंस इलाके में स्थित यह बंगला बहुत दिनों से खाली था। देखरेख के अभाव में दरवाजे-खिड़की और दीवालें बदरंग हो चली थीं। वे जल्दबाजी में आ गए थे, मना करने पर किसी अन्य को अलॉट हो सकता था, ऐसी राय नयन की थी। बाहरी हिस्से फूल -पत्ती के लिए रिक्त थे। उचित देखरेख न होने से पहले के लगाए फूल-पौधे सूख गए थे। इसे नए सिरे से सजाना-सँवारना होगा। मन में ऐसे ही विचार लिए किसन बाहर आकर खड़े थे, तभी बिल्कुल नई, मोटरसाइकिल आकर खड़ी हुई। आगंतुक पचास की वय को स्पर्श करता हुआ नौजवान था। जवान इसलिए कि उसने अभी तक जवानी बचा रखी है, खर्ची भी होगी तो बड़े हिसाब से। ये कोई और नहीं तहसील के बड़े बाबू थे। बड़प्पन तो दिखना चाहिए।

> आधे घण्टे के भीतर दो लोग बाइक से आये और बंगले के सारे पंखे उतार कर नए लगा दिए। बड़े बाबू रुके हुए थे। नए पंखे लगने के बाद मिस्त्री से बोले, 'तुम लोग पुराने पंखे यहाँ से ले जाओ, कल स्टोर में फेंक जाना और कल्लू सेठ से कहना के मुझसे बात कर लेंगे।'
> सुनकर मिस्त्री अचरज से बोला, 'साहब! पंखा तो एक ही खराब है।'
> बड़े बाबू उसे डाँट दिए, 'तो??

'गुड ईवनिंग सर।' बड़े बाबू ने आंग्ल भाषा में नमस्कार किया।
जवाब में किसन ने दोनों हाथ जोड़ लिए। किसन उसे लेकर भीतर आ गए। बैठने के लिए कहे, किन्तु वह बैठा नहीं, रिक्त कमरे के साथ बंगले के कठिन निरीक्षण में उलझा रहा।
'कैसे हैं साब!'
'ठीक हूँ।'
'ये बंगला बहुत दिनों से खाली था, रिपेयरिंग माँगता है। ऐसा हो नहीं पाया, आपके आते ही अलॉट कर दिया गया।'
'अधिक काम नहीं है, कमरों की पुताई हो जाए और बाहर का लॉन हरा-भरा हो जाए बस, इतना चाहता हूँ।'

'कलेक्टर साहब चाहते हैं, आपका बंगला किसी के कम न रहे, मुझे कहा गया है कि देखकर आओ।'
'ठीक है, कलेक्टर साहब जैसा चाहते हैं, वैसा करवा दीजिए। लेकिन फिलहाल अधिक खर्च करने की मेरी हैसियत नहीं है।'

बड़े बाबू को किसनदास की मासूमियत पर हँसी आ गई। वे जोर से हँसना चाहते थे, परन्तु मुँह के कोने में दबे पान के कारण सिर्फ मुस्कुराकर रह गए।
बड़े बाबू, किसन को गौर से देखकर अनुमान लगाए, 'लोक सेवा आयोग ने इन्हें तहसीलदार तो बना दिया है, परन्तु ये अभी कच्चे हैं, इन्हें पकाने का काम अब मेरा है।' यही सोचते हुए वे सड़क तक गये और मुँह साफ कर लौट आए।
'रूम का फैन नहीं चल रहा है, सुधार के लिए किसी को बोलना है। क्या आपकी नजर में कोई मिस्त्री है, जो आकर ठीक कर दे।' किसन ने कहा।
'मुझे दिखाइए।'
किसनदास उसे कमरे में ले गये, बड़े बाबू बिजली के संजाल के साथ पंखे को देखकर पूछे, 'कब से बंद है?'
किसन की जगह नयन ने उत्तर दिया, 'अभी थोड़ी देर पहले चलाने के लिए बटन दबाया तो नहीं चला।'
बड़े बाबू, 'मैम! यह अब नहीं चलेगा।'
नयन, 'क्यों नहीं चलेगा?'
बड़े बाबू, 'मुझे लगता है यह जल गया है। लेकिन आप परेशान न हों, नया फैन लग जाएगा।'
बड़े बाबू ने फोन मिलाया, 'अरे कल्लू भाई! बेहतरीन किस्म के तीन चार-पीस सीलिंग फैन के देकर मिस्त्री भेजो। जी-5 सिविल लाइंस में, फौरन।'

आधे घण्टे के भीतर दो लोग बाइक से आये और बंगले के सारे पंखे उतार कर नए लगा दिए। बड़े बाबू रुके हुए थे। नए पंखे लगने के बाद मिस्त्री से बोले, 'तुम लोग पुराने पंखे यहाँ से ले जाओ, कल स्टोर में फेंक जाना और कल्लू सेठ से कहना के मुझसे बात कर लेंगे।'
सुनकर मिस्त्री अचरज से बोला, 'साहब! पंखा तो एक ही खराब है।'
बड़े बाबू उसे डाँट दिए, 'तो?? जितना कहा गया जाए उतना ही सुना करो, समझे।'

वह निकाले हुए पंखे समेटकर जाने लगा, तब किसन से बड़े बाबू ने कहा, 'ठीक है साब, मैं भी चलता हूँ, हफ्ते भर में बंगला ओक्के हो जाएगा।'
'जी मेहरबानी।'
'लज्जित न करें सर, मैं तो सेवक हूँ आपका। पहले वाले साहब कहते थे कि सोनकर तुम छुट्टी न लिया करो, तहसील के काम रुक जाते हैं। अब आप ही बताइए साहब, मेरे भी सामाजिक कर्तव्य हैं उन्हें निभाने के लिए छुट्टी तो चाहिए न। वैसे मेरे आने-जाने पर कोई पाबंदी नहीं है, कलेक्टर साहब ने मुझे फ्री कर रखा है।'

'पंखों का बिल मुझे भिजवा दीजिएगा।'
'कैसी बातें करते हैं साहब, बंगला सरकारी है, आप सरकारी हैं, मैं भी सरकारी बाबू, तब सारी चिंता सरकार की। आपको कुछ नहीं करना है। किसी को एक पैसे नहीं देना है। बिल का भुगतान सरकारी लोग करेंगे।'
'मतलब चंदा करेंगे?'
'अरे नहीं साहब! चंदा-फंदा नेताओं का काम है। हम सरकारी लोग पूँजी का विनियोजन करते हैं जो समय पड़ने पर काम आये।'
मुस्कुराते हुए बड़े बाबू मोटरसाइकिल में चढ़कर चले गए। किसन और नयन उसे जाते हुए देखते रह गए। कमरे में बैठी लक्ष्मी रामायण के पन्ने पलटती रह गयी।

□□□□□

(दो)

जैसा बड़े बाबू ने आश्वासन दिया था, ठीक वैसे ही हुआ। बंगले का स्वरूप बदल दिया गया। कमरों का रंग बदल गया, खिड़की-दरवाजों में रेशमी पर्दे झूलने लगे। सूखे हुए लॉन में तरह-तरह के पौधे लगा दिए गये। लॉन हरा-भरा हो गया। नयन खुश थी, उसके मन मुताबिक काम हुआ था। लक्ष्मी को पहले आश्चर्य हुआ, फिर खुश हुई, जब नयन ने बताया कि सरकार के तरफ से अपने अफसरों के लिए यह सब किया जाता है। उसने जी-भर सरकार को दुआएं दी थी। तुलसी में दिया बत्ती की, आरती की और अन्य दिनों की अपेक्षा दो दोहा अधिक रामायण पढ़ी। नयन के मन मुताबिक बंगला सज गया था, वह प्रसन्न थी। एक कमी थी तो नेम प्लेट की थी, वह भी आज पूरी हो गई थी। आसमानी रंग को और निखारते हुये सुनहरे अक्षरों में नेम प्लेट बनकर आ गई थी जो आँखों के हर कोण से आकर्षक और खूबसूरत लगी थी। नयन प्लेट वाले को हिदायत दे रही थी, 'थोड़ी लेफ्ट लो, न न अधिक हो गया, जरा-सा राइट लो। थोड़ी अप, एस ओक्के।'

थोड़े श्रम के बाद वह जगह फिक्स हो गई, जहाँ नेम प्लेट लगनी थी। वह मशीन से पेंच कसने का होल बनाने लगा। गों-गों, किर्र-मिर्र की आवाज सुनकर लक्ष्मी बाहर निकली और एक नजर छिदती दीवाल पर डालकर पुनः भीतर घुस गई। लक्ष्मी ने कभी स्कूल का मुँह नहीं देखा था। हिंदी पढ़ना और लिखना किसन के पिता से सीखी थी। अब वह हिंदी की कोई भी पुस्तक अटकते हुए पढ़ सकती है। रामायण तो जैसे याद कर ली हो। संस्कृत के श्लोक और छंदों को छोड़कर दोहा, चौपाई पढ़ लेती है। समझ में कितना आता है वही जाने किंतु जो भी पढ़ा और समझा है उसे कार्यव्यवहार में उतारने की चेष्टा जरूर करती थी।
शाम के बाद का वक्त, किसन तहसील से लौट आया था। लक्ष्मी उसे पानी दे आई थी। सोफे पर बैठकर पानी पी रहा था कि खुद के पिछले सारे रिकॉर्ड ध्वस्त करती हुई नयन चाय बनाकर ले आई थी। चाय के साथ बात न छिड़े तो चाय और मट्ठे में एक जैसा स्वाद आता है। चाय की तासीर बातों की गर्माहट के सिवा कुछ नहीं होती। आग का ताप तो चीनी मिट्टी के कप तक होता है। ओंठों में जो गर्माहट और मिठास महसूस होती है, वह चीनी की नहीं, बातों की होती है। यही मिठास पूर गर्माहट रिश्तों को तल्ख होने से बचाती है। सुबह या शाम की चाय परिवार के साथ पीने से आपस में सम्बंध प्रगाढ़ होते हैं।

कुछ ऐसी बातें चलीं---लक्ष्मी, 'थक गए किसन?'
उत्तर नयन ने दिया, 'थकान तो होगी ही, पूरी तहसील जो देखते हैं।'
लक्ष्मी, 'क्या बाहर निकलकर तहसील देखना पड़ता है?'
किसन, 'नहीं अम्मा! बाहर जाना बहुत कम होता है। आजकल कागज आते-जाते हैं, वे भी बहुत जरूरी होने पर। आजकल सारा काम मेल से हो जाता है।'

लक्ष्मी, क्या जाने मेल को? जिज्ञासु मन में हलचल हुई थी सो पूछ ली, 'मेल?क्या किसी आदमी का नाम है?'
नयन और किसन दोनों हँस पड़े, हँसती हुई नयन बोली, 'सरकार को चाहिए कि स्कूल में बच्चों के साथ सयानो को भी पढ़ाया जाए।'
लक्ष्मी तुनग गई, 'का हम बच्चे हैं कि स्कूल जाएं। जब स्कूल जाना चाहिए था, तब गरीबी आड़े आई, वर्ना हमें अपढ़ कहकर कोई अपमानित न करता।'
'सॉरी अम्मा! मैं तो आपको हँसाने की कोशिश कर रही थी, आप बुरा मान गईं।'
लक्ष्मी, 'नहीं, नहीं बिल्कुल नहीं, खूब हँसो, मैं तुम्हारी हँसी में शामिल हूँ, कम से कम मैं वह पात्र तो हूँ जिसे देखकर हँसी आये, क्या इतना कम है? मैं मेल के विषय में पूछी हूँ, नहीं जानती इसलिए न।'
उसे समझाने के लिए किसन मोबाइल ले आया और बताने लगा, 'अम्मा!
ये देखो जो सन्देश किसी को भेजना हो इसमें टाइप कर दो जिसे भेजना हो भेज दो, फौरन सन्देश जायेगा। ये बिना मिटाए मिटता भी नहीं, इसे कागज पर छापा भी जा सकता है।'
किसन समझाता रहा लक्ष्मी ताज्जुब करती रही। नयन को प्रसंग अरुचिकर लगा। वह बात का रुख मोड़कर बोली, 'नेम प्लेट देखी, बहुत खूबसूरत लगती है।'
किसन, 'हाँ देखी है, अच्छी है।'
लक्ष्मी को नेम प्लेट से कोई रुचि नहीं थी। उसे किसन का केडी हो जाना ठीक वैसे ही लग रहा

था जैसे किसी भले-चंगे, रूपवान आदमी का जानबूझकर कुरूप हो जाना। वह चुप रही। उसे चुप देखकर किसन बोला, 'अम्मा को केडी शर्मा नाम पसंद नहीं है।'
लक्ष्मी, 'मुझे नेम प्लेट से कोई एतराज नहीं है। मेरी अब अकेले की कोई खुशी नहीं है, मेरी सारी खुशी तुम दोनों के खुश रहने पर है। तुम दोनों के लिए जो ठीक है, उसमें मेरा भी अँगूठा लगा मानो।'

□□□

आज सुबह-सुबह ही बड़े बाबू की मोटरसाइकिल गेट के बाहर आकर रुकी। बड़े बाबू की उपस्थित नयन और किसन को अब अच्छी लगने लगी थी। साहब लॉन में ही मिल गये। देखते ही स्वागत किये, 'आइए, आइए बड़े बाबू! सुबह-सबेरे इधर कैसे?'
'कुछ जरूरी बात है सर।'
'जी बताइए।'
'कल छक्का को नायब सर ऑफिस से निकाल दिए। वह रात में रोता हुआ मेरे घर आया था।'
'यह छक्का कौन है?'
'नाम छक्की लाल है, पर सार्ट में उसे छक्का कहते हैं।'
'वह बुरा नहीं मानता?'
'बुरा? अरे साहब! कचहरी की नौकरी में सिर में पटाखे फूटने को भी लोग इनाम समझते हैं।'
'क्या गलती की उसने?'
'कोई जरूरी फाइल गुम गई है और फाइलों का रख-रखाव छक्का ही करता था। उसे दोषी मानकर निकाल दिए होंगे।'
'क्या वह नियमित प्यून नहीं था?'
'नहीं साहब, उसे दैनिक वेतन पर पिछले साल रखा गया था।'
'मतलब दैनिक वेतन भोगी कामगार था।'
'तभी न----।'
'ठीक है, मैं उन्हें समझा दूँगा।'

इसी तरह से छोटे-मोटे काम बड़े बाबू किसन से करा लिया करते थे। वे भी अब बड़े बाबू को मना करने की स्थित में नहीं थे। हल्का पटवारियों से मिली हुई राशि उन्हीं के मार्फ़त किसन तक आती थी। शुरुआत में तो उन्होंने नाकुकुर किया किंतु नयन के समझाने पर मान गए। एक दिन दफ्तर में बड़े बाबू प्रकट होकर बोले, 'सर जो आपके बंगले में कुछ महीने पहले काम हुआ है उसका पेमेंट होना है।'
'अभी तक नहीं हुआ?'
'वही तो करना चाहता हूँ।'
'कीजिए, आप तो बोले थे सरकारी फंड से भुगतान होगा।'
'अब भी वही कह रहा हूँ। आप इन दोनो पेपर में चिड़िया बैठा दीजिए।'
किसन का दिमाग चकराया, 'कागज में चिड़िया?'
बड़े बाबू विस्तार से बताने लगे, 'साहब, नजूल शाखा में ये दोनों कई साल से कुंडली मारे बैठे हैं। नाम के बाबू हैं, साले करोड़ों में खेलते हैं, इस शाखा में ऊपरी कमाई बहुत है। इन्हें करेंट मारना जरूरी है। सीट बदलनी अब आवश्यक हो गई है।'
'ये कैसे हो सकता है, यहाँ चपरासी से लेकर कलेक्टर तक राजनीति से संरक्षित हैं। इन्हें छेड़ने से बहुत हल्ला मचेगा।'
'कुछ नहीं मचेगा, ट्रान्सफर तो हो नहीं रहा है।'

मन मारकर किसन ने दस्तखत कर दिए। बंगले में हुए काम का पेमेंट हुआ या नहीं हुआ, बड़े बाबू जाने। यह जरूर हुआ कि उनके बदले में बड़े बाबू ने अपने आदमी फिट कर दिए। किसन के ऊपर एसडीएम साहब नाराज हो गए सो अलग से, क्योंकि वे उनके खास आदमी थे। उस दिन की घटना के बाद किसन भीतर से दुखी रहने लगे। कुछ ऐसे कांटे होते हैं जिनकी कसक को अकेले ही झेलना होता है। किसन चाहते हुए भी मन की बात नयन से, न अम्मा से बता सकते थे। अम्मा भय खाती और नयन के नजरों में वे कमजोर अफसर लगते। दोनों तरफ से उन्हें मानसिक क्षति मिलने की पूरी संभावना थी। दिन पर दिन बीतते गये, साल पूरा हुआ।

आज स्वतंत्रता दिवस है। आज भर क्या? पूरे साल आजादी है जिसके जो मन आये करे, कहे, कोई बंदिश नहीं, कोई रोक-टोक नहीं, जिसके जो मन आए पहने-ओढ़े, घूमे-फिरे। पशु भी आज़ाद हैं, धरती की सारी घास उनकी है, जहाँ मन होगा मुँह मारकर पूँछ फटकार आयेंगे, गोबर कर आयेंगे। कुत्ते किसी के भी घर जाकर भूंक आयेगें। सरकारी मोहकमे आज़ाद हैं, इनके अलग नियम कायदे हैं। समानता केवल एक है अपने से कमजोर का गला दबाने में हर कोई माहिर है। यही आज़ादी का उत्स है। अपराह्न का समय होगा। डोर बेल चीख उठी। द्वार उठकर किसन ने खोला। नयन, सावनी त्योहारों के चलते मायके गयी हुई थी। घर में केवल माँ और किसन थे। लक्ष्मी अपने कमरे में पड़ी आराम की मुद्रा में थी। द्वार खुलने की आहट पाकर वह उठकर बैठ गयी और कान लगाकर आगंतुकों और किसन के दरम्यान की बातचीत सुनने लगी। उसे सुभा हुआ कि आने वाले कहीं वही लोग तो नहीं हैं जो पहले भी आए थे, केडी को पूछ रहे थे।

आगन्तुक, 'सर वो तालाब हमारा है। सालों से हमी लोग काबिज हैं, लेकिन उनके पेपर नहीं हैं। पेपर तैयार हैं, बड़ी कृपा होगी जो आप दस्तखत कर देंगे।'
किसन, 'हल्का पटवारी से मिलकर फाइल प्रोसेस में कराइये, जब मेरे पास आएगी तब देख लूँगा।'
आगंतुक, 'पटवारी द्वारा सभी पेपर तैयार किये जा चुके हैं। बस आपकी हाँ चाहिए। अनुमति मिले तो वे पेपर आगे बढ़ें।'

कुछ पलों की खामोशी फिर पन्नों की बेबस फड़फड़ाहट, शायद कागज देखे-दिखाए जा रहे हैं, फिर किसन की आवाज़, 'कहा न, पेपर तरीके और नियम से मेरी टेबल तक आने दीजिए। जो ठीक होगा वह मैं करूँगा ही, आप लोगों को परेशान होने की जरूरत नहीं है।'

आगंतुक, 'ठीक है साब! ऐसा ही करेंगे, ये बैग आपकी सेवा में लाया हूँ, इसे रख लीजिए, कम लगे तो निःसंकोच कहिएगा, सेवक हाजिर हो जायेगा।'
किसन, 'क्या है इसमें?'
'अधिक कुछ नहीं, मात्र शुभ के लिए है। पहली मुलाकात खाली-खाली कैसे हो?'
तेज आवाज में किसन, 'आप हमें रिसबत देने आए हैं। मुझे बिल्कुल मंजूर नहीं है और मेरे घर में दोबारा से ऐसी जिक्र के लिए मत आना। ये काम ऑफिस के हैं। मुझे जो सही लगेगा वह करूँगा। आप लोग यहाँ से जाइये। मुझे जरूरी काम से बाहर निकलना है।'
आगंतुक, 'ठीक है जाता हूँ किंतु यह तो आपको रखना पड़ेगा।'
किसन, 'मुझे कुछ नहीं रखना, आप लोग बैग साथ में ले जाइये।'

आगंतुक, 'घर आयी लक्ष्मी का निरादर मत कीजिए, बहुत पछतावा करेंगे।
तल्ख आवाज़ में किसन, 'मुझे धमकी देने की कोशिश मत कीजिए। काम अगर जायज नहीं है, तो मुझसे बिल्कुल नहीं होगा।'

किसन के साफ मना करने पर आगंतुक धमकाने लगा, 'आप अभी शेरू दादा को नहीं जानते, उनके पहुँच बहुत ऊपर तक है। वे मन में जो ठान लेते हैं, पूरा करके ही दम लेते हैं। ठीक है, आपको नहीं करना है तो मत करिए और कोई करेगा, काम तो होगा ही, लेकिन आपका बहुत नुकसान होगा।'

लक्ष्मी से बर्दास्त नहीं हुआ वह उठकर आ गई। किसन ने आगंतुकों को घर से बाहर कर दिया था। वे धमकाते हुए चले गए थे। कमरे में अमूर्त सन्नाटा लेकिन किसन के दिलोदिमाग में हलचल करने वाला तूफान गोल-गोल घूम रहा था। वे भारी मानसिक क्लेश देकर गए थे।
'कौन थे?' लक्ष्मी ने पूछा।
किसन, 'तुमने सुना नहीं, वे क्या कह रहे थे?'
लक्ष्मी, सुनी हूँ तभी तो कह रही हूँ, वे रिस्बत देकर कोई गलत कागज में दसकत कराना चाह रहे थे। मत करना ऐसे किसी भी कागज में दसकत बेटा! जो गलत लगे। बड़े भरोसे के साथ सरकार ने तुम्हें साहब बनाया है, रहने को महाराजाओं की तरह किला दिया है आने-जाने के लिए मोटर दी है। ध्यान रखना, सरकार के साथ भूले से भी छल न हो।'
किसन, 'अम्मा! कोयले के कारोबार में कालिख तो लगेगी ही, कपड़े काले होंगे ही। इतना तो मुझे पहले से पता था किंतु यह नहीं जानता था कि आत्मा में भी कालिख पोतने चले आएंगे।'

लक्ष्मी, 'बड़े बाबू से बात करो।'
किसन, उनके भी उज्जर वस्त्र नहीं हैं, कहने से कोई फायदा नहीं है, बेकार में बात फैलेगी। मैं नियम-कायदे से काम करूँगा। कोई भी होगा, मेरा क्या कर लेगा, बहुत होगा तो तबादला हो जायेगा, बस।'

बात यहीं समाप्त हुई या नहीं हुई किसन को मालुम होगी, किन्तु घर में अब शांति रही। सावन, भादों के तीज-छठ आये, खुशी से गए। कुछ महीने बाद घर में खुशी का एक बड़ा मौका आया। नयन ने खूबसूरत कन्या का जन्म दिया। नाम रखा गया 'नैंसी।' यह नाम लक्ष्मी को बहुत पसंद आया। नैंसी मतलब नयन-सी, आँखों की तरह सुंदर, सुकोमल, चंचल।

पुराने अक्षरों के ऊपर नए अक्षर लिखता हुआ समय अपनी गति से आगे बढ़ता रहा। तहसीलदार के पद पर रहते हुये किसन को दो साल बीत गए थे। बड़े बाबू ने उन्हें पक्का तहसीलदार बना दिया था। अब उन्हें पद अनुरूप कार्य-व्यवहार करने का तरीका आ गया था, वे चतुर हो गए थे। आवश्यकता भी है, स्वयं को जीवित रखने के लिए छल-कपट की शब्दावली को समझना आज के युग में एक जरूरत है। समय से बड़ा कोई अध्यापक नहीं, वह सब कुछ सिखा-पढ़ा देता है। लक्ष्मी ने भी समय के अनुरूप चलना सीख लिया था। बहू से उसकी पटरी कभी जमी तो नहीं फिर भी एक समझौता कर लिया था कि अब वह किसी से कुछ नहीं कहेगी। जिंदगी ढर्रे बदलकर यात्रा करती है, इस सत्य को समझने और स्वीकार करने वाला हमेशा सुखी रहता है। घर संसार में जो जैसा चल रहा है वह समय का आभूषण है, वह अपनी पसंद से सृंगार करेगा ही, कोई विरोध भी करे तो करता रहे। समय जिद्दी है किसी की नहीं सुनता। धरती पर बहुत से पैग़म्बर आये, समाज सुधारक आए, धर्ममर्मज्ञ आये, फिलास्फर आये, एक से बढ़कर एक नई फिक्र के इंसान आये, क्या कर लिए? किसने उनका कहा माना? कौन उनके मन मुताबिक चला? कोई नहीं न-----फिर लक्ष्मी, चौथपन में पहुँचकर जी को क्यों हलाखान करे? नयन जो कहती है, करती है वही ठीक है। वह अपनी मर्जी से रहे, पहने-ओढ़े, घूमे-बागे, उसकी निजी जिंदगी है, उसे अपनी तरह से जीने का हक जाता है।

□□□

समय के साथ नैंसी के हाथ-पाँव में बल आने लगा था। वह साल भर की हो गई थी, आधुनिक कवियों की तरह गिरते-पड़ते-सम्हलते हुए चलना सीख गई थी। रोने-हँसने, गिरने-उठने की भंगिमाओं में जो चित्र देखने को मिल रहे थे, वह आज तक किसी चित्रकार की तूलिका में उतरे ही नहीं थे। नैंसी की हर अदाओं में संगीत की निर्झरिणी का उत्स दिखाई पड़ता था। वह ज्यादातर दादी के पास रहती थी। पूजा-पाठ की सामग्री को इधर से उधर करने में यदि उसे आनन्द आता था, तो लक्ष्मी को फिर-फिर से सहेजने में। उसके जेहेन में वे पल तस्वीर होकर बैठे हैं, याद है जब नैंसी के बरहों संस्कार की पार्टी में जिले भर के अफसर, मातहत आये थे। बड़े लोग थे, साथ में आई उनकी पत्नियां और बड़ी थीं, लिपी-पुती ठीक वैसे ही जैसे गोबर से लिपा हुआ परिशोधित ग्रामीण घर का आँगन। ऐसे वातावरण में लक्ष्मी का नाचना हास्य पैदा कर सकता था, किसन के ग्रामीण पृष्ठभूमि की आलोचना हो सकती थी, परन्तु उसे अन्य के समझ की क्या चिंता, जिसका मनमयूर पंख खोलकर नाच उठा था।
लक्ष्मी का नृत्य देखकर सब खड़े हो गए थे, तालियों के लिए हाथ खुल गए थे। किसन और नयन फूले नहीं समा रहे थे। खुलकर तारीफ हुई थी उस नृत्य की। नई पीढ़ी के लिए कौतूहल पैदा करने वाला नृत्य था तो उन आँखों के लिए एक विस्तृत पटकथा की तरह था जो अभी तक सिर्फ फिल्मी नृत्य देखी थीं।

□□□

किसन, ऑफिस में बैठे किसी से फोन पर बात कर रहे थे। बात लम्बी खिंचती देख चपरासी से सब्र नहीं हुआ, उसे एसडीएम साहब का अर्जेन्ट मैसेज देना था। वह सामने जाकर कहने लगा, 'एसडीएम साहब ने आपको बुलाया है।'
किसन ने नाराजगी जाहिर की, 'तुम दो मिनट रुक नहीं सकते थे। गला पकड़ने सामने आकर खड़े हो गए।'
चपरासी, 'क्या करूँ साहब! जल्दी न कहता तो भूल जाता, साहब की डाँट पड़ती, अब कह दिया तो आपकी डाँट मिल रही है। साहब आप बहुत अच्छे इंसान हैं, कुछ दिन पहले तक आप किसी को डाँटते नहीं थे। बड़ी से बड़ी गलती पर भी 'कोई बात नहीं' कह कर रह जाते थे।'
किसन उठकर आये और उसे समझाने लगे, 'दिल में मत लो, दोबारा से ध्यान रखूँगा।'

चपरासी, 'साहब! हमारे लायक कोई सेवा हो कहिए, हम रात-दिन एक कर देंगे। आप जब से आये हैं तब से हम छोटे कर्मचारी भी मान-सम्मान महसूसते हैं। आप ही की कृपा से

छक्का की नौकरी बच गई। वह आपके गुण गाता है। कहता है, केडी सर भगवान हैं।'
'ठीक है, तुम इधर ही रहना, बड़े बाबू भी नहीं हैं। मैं जरा एसडीएम साहब को सुन आऊँ।'

पेट की बात मुँह तक असर में थी। एसडीएम शिवहरे किसन के इंतज़ार में बाहर नजरें जमाये थे। किसन के पहुँचते ही बोल पड़े, 'बैठो जरा, मैं वॉशरूम से होकर आता हूँ।'
किसन बैठ गए, साहब की सेकेट्री आकर्षक अंदाज़ में गुड नून कहती हुई सीट छोड़कर नजदीक आकर खड़ी हो गई।
'आप अपने साथ रख लो साहब, इस खुसठ से परेशान हो गई हूँ। ड्यूटी के आधे दिन तो यूरिन पास करता है। इसे मेरी बनाई नोटशीट कभी पसंद नहीं आई, हमेशा खामियां निकालता रहता है।'

किसन के पेट में हँसी उठी, लेकिन हँसने से पहले ही वे आ पहुँचे थे। वे छूटते ही बोले, 'केडी 'रेवती नदी' से अबैध रूप के बालू निकासी की सूचना मिल रही है। उसे रोकना है।'
किसन, 'यह खनिज विभाग और पुलिस विभाग के अधिकार क्षेत्र का मामला है, इसमें हमारी भूमिका नहीं बनती है।'
'बनती है, हमारी भूमिका बनती है, केडी साहब। अगर नहीं बनती है तो बनाओ। आपको ज्ञात होना चाहिए कि जिस घाट से सबसे अधिक रेत निकाली जाती है, वह हमारी तहसील में पड़ता है। आप एक टीम बनाओ और रेत खनन रोको।'
किसन के नेतृत्व में एक टीम गठित हुई, जिसमें राजस्व अधिकारियों के साथ पुलिस-बल का सहयोग लिया गया था। चुपके से रात्रि में धावा बोला गया। घाट में इंजिन बन्द किए हुए रेत लोड करते हुये ट्रक पकड़े गये। घटना स्थल पर जो ड्राइवर मिले, उन्हें गिरफ्त में लेकर पूछताछ की जा रही थी। तभी अँधेरे की आड़ से गोलियाँ चलने लगी। पूरी टीम सिर में पैर रखकर भागी। पुलिस वालों को किसन रुककर हमले को रोकने के लिए कहते रह गए किन्तु कोई रुका नहीं। सर्वप्रथम पुलिस वाले ही पलायन किए थे। अचानक से सनसनाती हुई एक गोली किसन के पेट में आकर धँस गई। वे चीखते हुए गिर पड़े। कुछ और गोलियाँ बाद में उन पर चलाई गई। आननफानन में पुलिस मुख्यालय को खबर गई, हथियार लेकर पुलिस पहुँची तब तक अपराधी तत्व ट्रक लेकर भाग चुके थे। किसन को घायल अवस्था में हॉस्पिटल लाया गया। तत्काल ही डॉक्टरों की टीम ने शल्य क्रिया से शरीर के अंदर धँसी गोलियाँ बाहर तो कर दीं, किंतु उनकी हालत गम्भीर बनी रही। समाचार फैलते ही खैरियत जानने के लिए जिला प्रशासन का अमला हॉस्पिटल पहुँच गया था। नैंसी को सासु के पास छोड़कर बहाने का सहारा लेकर नयन चली आई थी। किसन को सघन चिकित्सा यूनिट में रखा गया। चिकित्सकों की टीम उनकी देखरेख में लगी रही। अंततः वही हुआ जो ईश्वर की इच्छा थी, सूरज की लालिमा छिटकते-छिटकते किसन की मृत्यु हो गई। कैसी विधि की इच्छा? एक सूरत अस्त हो रहा था दूसरा प्राची से निकलने की तैयारी में था। मृत्यु की सूचना मिलते ही नयन बेसुध होकर गिरने लगी, बड़े बाबू की पत्नी ने उसके शरीर को सहारा दिया।

□□□

लक्ष्मी ने जागकर रात काटी, उसे बताया कुछ नहीं गया था किंतु भीतरी चेतना ने किसी अनहोनी से सूचित कर दिया था। वह रात भर छटपटाती हुई अंदर-बाहर होती रही। भोर की बेला में उसकी आँख लग गई, तभी उसने देखा, सिरहाने किसन खड़ा हुआ कह रहा था, 'अम्मा! तुम्हे केडी नाम की नेम प्लेट पसंद नहीं है। मैं बदलकर किसनदास की लगवाए दे रहा हूँ।'
स्वप्न के जाते ही लक्ष्मी सजग हुई। वह बाहर निकलकर देखी, नेमप्लेट दीवार में अब नहीं थी।'

□□□□□

गर्भपात कराना किसका अधिकार, क़ानूनी रोक कितनी उचित!

सोनम लववंशी

अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट ने आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करने वाली महिलाओं के लिए गर्भपात कानून में बदलाव करने का निर्णय लिया है। इसके तहत पांच दशक पुराने गर्भपात कानून पर रोक लगा दी गई। अब अमेरिका में 50 साल पुराना संवैधानिक संरक्षण समाप्त हो गया। साथ ही अमेरिका के सभी राज्य गर्भपात को लेकर अपने नियम खुद बना सकेंगे। इस फैसले के बाद सम्भवतः अमेरिका के कुछ राज्यों में गर्भपात पर पूरी तरह से प्रतिबंध लग जाएगा। देखा जाए तो यह फ़ैसला कहीं न कहीं महिलाओं के लैंगिक समानता और मानवाधिकार के ख़िलाफ़ है। अमेरिका में 1973 को रो बनाम वेड मामले में सुप्रीम कोर्ट ने गर्भपात को संवैधानिक अधिकार का दर्जा दिया था। अमेरिका गर्भपात का अधिकार वापस लेने वाला पहला देश बन गया है। पिछले 25 सालों में दुनिया ने गर्भपात को लेकर कानूनों में कई बदलाव किए। लेकिन, तीन देश ही ऐसे है जहां गर्भपात को कठिन बनाने के लिए कड़े नियम कानून बनाए गए है। दुनिया में आज भी 67 देश ऐसे जहां गर्भपात कराना बहुत ही आसान है। इन देशों में बिना वजह बताए सरलता से गर्भपात कराया जा सकता है। वही अधिकतर देशों में शुरुआती तीन महीनों में गर्भपात कराना गैरकानूनी नहीं माना गया। जबकि, 26 देश तो ऐसे हैं, जहां गर्भपात कराना पूरी तरह से प्रतिबंधित है। फिर चाहे माँ या बच्चे की जान पर ही बात क्यों न आ जाए।

भारत की बात करें तो हमारे देश में गर्भपात को लेकर कोई सख़्त नियम नहीं है। भारत में सुरक्षित गर्भपात कराना कानूनी अधिकार है। हमारे देश में गर्भपात के लिए 'मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रग्नेंसी एक्ट 1971' में बना था। इसके बाद 2021 में इस एक्ट में कुछ सुधार किए गए। इसके साथ ही कुछ विशेष परिस्थितियों में महिलाओं को मेडिकल गर्भपात 20 सप्ताह से बढ़ाकर 24 सप्ताह कर दिया गया है। संशोधित कानून के तहत दुष्कर्म पीड़िता या नाबालिग लड़की 24 हफ्ते तक गर्भपात करा सकती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के मुताबिक, हर साल 2.5 करोड़ असुरक्षित गर्भपात होते है। जिसमें करीब 37 हजार महिलाओं की मौत तक हो जाती है। वैसे गर्भपात पर प्रतिबंध लगा देने मात्र से गर्भपात के आकंड़े कम नहीं होंगे, बल्कि गैरकानूनी तरीके से गर्भपात कराने के आंकड़े जरूर बढ़ जाएंगे।

एक अनुमान के मुताबिक कोरोना महामारी के पहले साल ही 14 लाख महिलाएं अनचाहे गर्भ का शिकार हो गई थी। हाल ही में संयुक्त राष्ट्र की वार्षिक रिपोर्ट में भी इस बात का खुलासा हुआ कि दुनिया में हर साल 12.1 करोड़ से ज्यादा महिलाओं को अनचाहे गर्भधारण का सामना करना पड़ता है। यहां अनचाहे गर्भधारण से आशय है, महिलाओं को उनकी मर्जी के बिना गर्भवती कर दिया जाना। कई बार जबरदस्ती, कई बार वे मज़बूरी में शिकार बन जाती हैं तो कई बार युद्धकाल की भेंट चढ़ना पड़ता है। ये सदियों से होता आ रहा है और समाज के आधुनिक होने के बाद भी इसमें कोई अंतर नहीं आया। ऐसे में देखा जाए तो गर्भपात पर प्रतिबंध लगाना जायज़ नहीं ठहराया जा सकता! क्योंकि, किसी और के किए की सजा सिर्फ महिलाओं पर मढ़ देना आधी आबादी के अधिकारों का हनन होना है।

सवाल तो यह भी उठता है कि अमेरिका जैसे देश में गर्भपात पर प्रतिबंध लगा देने भर से क्या महिलाएं गर्भपात कराना बन्द कर देगी? बच्चे पैदा करने या नहीं करने का अधिकार एक महिला को होना चाहिए। क्या सुप्रीम कोर्ट के फैसले में इस बात पर गौर किया गया था कि जब तक महिला बच्चे को जन्म नहीं दे देती है, तब तक पुरूष साथी की भी जवाबदेही हो कि वह महिला और बच्चे का ख़्याल रखे। जो महिला बच्चे को जन्म ही नहीं देना चाहती क्या वह अपने बच्चे की परवरिश सही ढंग से करेगी! सवाल कई हैं, लेकिन इनके जवाब मौजूदा दौर में कहीं दिखाई नहीं देते। बात अगर भारत के बारे में की जाए, तो आज भी हमारे समाज में महिलाओं के पास अपनी इच्छा से गर्भवती होने या न होने का कोई विकल्प नहीं है। वे इतने सामाजिक और आर्थिक बंधनों में जकड़ी हैं कि इस दिशा में वे सोच ही नहीं पाती। इस बात के पक्ष में कभी कोई महिला आंदोलन भी खड़ा नहीं हुआ।

ऐसे में सवाल उठता है कि अनचाहे गर्भ के लिए क्या महिलाएं ही जिम्मेदार हैं! क्या पुरुषों की कोई जवाबदेही नहीं बनती। वैसे हमारे पुरुष प्रधान समाज में अनचाहे गर्भ के लिए महिलाओं को ही क्यों जिम्मेदार ठहरा दिया जाता है। अगर कोई लड़की गर्भवती हो जाए, तो समाज उसे हीनभावना से देखता है। जबकि, कोई उस लड़के को गलत नहीं समझता, जो इस कृत्य में सबसे बड़ा भागीदार होता है। यहां तक कि समाज और परिवार वाले भी लड़के के पक्ष में खड़े हो जाते हैं। ऐसे में यह दोयम दर्जे की मानसिकता

कहानी

नेपोकिडनी

अचानक फेसबुक पर मुझे टैग की गयी पोस्ट्स पर मेरी नजर पड़ी तो हैरान रह गया।

सयानी नाम के एक काव्य संकलन की चर्चा महाकवि की वाल पर थी। साहित्य में एक नेपो किड का आगमन हो चुका था। जिस तरह सिनेमा के हर नायक का पुत्र नायक बनता है, राजनीति में नेता का पुत्र नेता बनता है ठीक उसी परंपरा का निवर्हन करते हुए साहित्य के एक नेपो किड का सफल प्रादुर्भाव हो चुका था।

तनिक ध्यान से पढ़ा तो देखा कि मैं एक नहीं बल्कि दो पोस्ट में टैग हूँ, एक तो नेपो किड की थी और दूसरे नेपो किडनी की थी ,किडनी से आशय लड़की का मत निकालें बल्कि ये ये तीन बच्चों की मम्मी थीं, लोग किड का नेपोटिज़्म करते थे अब किडनियों यानी किड की मम्मियों का भी नेपोटिज़्म करने लगे। मैंने इस नेपोकिडनी के बारे में पढ़ना शुरू किया।

नेपाकिडनी का नया काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ था जिसका शीर्षक था

“अप्रतिम एवं कालजयी कविताएं “ कवयित्री लवनिका चंचला।

उनकी फोटो लगायी गयी थी जिसमें वो बिल्कुल नवयुवती लग रहीं थीं।

अलबत्ता कैप्शन में जरूर लिखा था

“ वरिष्ठ कवियत्री की चुनिंदा कविताओं का संग्रह”।

मेरे लिये दोनों केस विस्मयकारी थे। सयानी एक तेरह वर्षीय बच्ची थी जिसकी दादी अरुणाभी जी बहुत ही वरिष्ठ और सम्मानीय कवियत्री थीं।

मैं उन्हें बरसों से निजी तौर से जनता था। सयानी उनकी इकलौती पोती थी। उन्हें इस बात का बहुत मलाल रहा करता था कि सयानी बिल्कुल भी नहीं पढ़ती लिखती थी।

वो हिंदी और हिंदुस्तान से चिढ़ती थी,दिन -रात कनाडा में रहने वाली अपनी मौसी के पास जाकर पढ़ने -रहने और बसने का ख्वाब देखा करती थी।

वो सीलमपुर से जब ओटावा के सड़कों की तुलना करती तो उसे अपना जीवन और रहन -सहन तुच्छ लगने लगता।

उसे लगता था कि उसकी दादी बड़ी कवियत्री थीं तो बहुत पावरफुल भी होंगी। वो हिंदी प्रान्त के हिंदी मीडियम से पढ़ी ,ठेठ

हिंदी की कवियत्री अरुणाभी जी से अंग्रेजी में ही बात किया करती थी। उसे हिंदी में बात करना तौहीन और अपमानजनक लगता था,और उसकी दादी का लिखना -बोलना गंवई पन लगता था और बहुत अखरता मैंने इस चमत्कार को मन ही मन नमस्कार किया।

ये चमत्कार जानने के लिये मैंने अरुणाभी जी को फोन किया। फोन उठाते ही उन्होंने दुआ -सलाम का अवसर दिए ही मुझसे कहा

“मैं जानती थी व्यंग्यकार महोदय, तुम शब्दों की चिकोटी काटने के लिये मुझे फोन जरूर करोगे। यही जानना चाहते हो ना कि हिंदी से चिढ़ने वाली बच्ची हिंदी की कवियत्री कैसे बन गयी”।

“जी मैंने इसलिये नहीं बल्कि आपका हाल -चाल जानने के लिये फोन किया था। कोई भी कभी भी कविता लिख सकता है ,इसमें क्या है ? कविता का हाल “गरीब की जोरू सबकी भौजाई जैसा है फिलवक्त “।

वो उधर से खिलखिलाकर हंसते हुए बोलीं –

“बोल दी तुमने ना लाख टके की बात।व्यंग्य की चाशनी में लपेटकर जूता मारा कि कोई भी कभी भी कविता लिख सकता है। वास्तव में हिंदी में कोई भी कभी भी कविता लिख सकता है। लेकिन ये कविताएं सयानी ने नहीं लिखी हैं बल्कि मैंने लिखी हैं। वास्तव में उसे कुछ महीने बाद कनाडा जाना है एक ट्रूप के साथ। उस पर मिनिस्ट्री ऑफ कल्चर से टिकट ,वीजा आदि पर सब्सिडी मिल जाएगी। अब अगर कोई कवियत्री हो तो उसे तमाम सहूलियतें मिल जाएंगी। सो ये काव्य संग्रह आ गया अब इसी के आधार पर वो कवियत्री मान ली जाएगी और नाम मात्र के पैसों में कनाडा घूम भी आयेगी। जब सिनेमा में ,राजनीति में नेपोटिज़्म हो रहा है। वहां पर नेपाकिड्स लांच हो रहे हैं तो यहां क्यों नहीं हो सकते ? तुम मुझे लेडी करन जौहर समझ सकते हो ,बस एक फर्क है कि सब अपने बच्चों के लिये नेपोटिज़्म करते हैं ,और मैंने अपनी पोती के लिये नेपोटिज़्म कर दिया”

ये कहकर वो ठहाके लगा कर हँसी।

मैं कुछ कहने ही वाला था तब तक मोबाइल पर दूसरी काल आने लगी।

अरुणाभी जी की कॉल को होल्ड पर रखकर मैंने इनकमिंग काल को देखा।ये हमारे प्रकाशक महोदय बागड़ माहेश्वरी जी का काल था। लेखक के लिये प्रकाशक की काल किसी दैवीय चमत्कार से कम नहीं होता।

मैंने लपककर उनका फोन उठाया उधर से उन्होंने कहा-

“आपने फेसबुक देखा एक पोस्ट में टैग हैं आप “।

इनके झूठ से मैं आज़िज आ चुका था मैंने भी झूठ ही कहा-

“ जी अभी तक तो नहीं “।

उन्होंने हुक्म सुनाते हुए कहा-

"आपके फेसबुक फ्रेंड करुण क्रंदन जी की पत्नी की किताब आयी है, लवनिका चंचला उनका नाम है। आपको उनके संग्रह पर लिखना है और बहुत अच्छा लिखना है कुछ कालजयी टाइप सा"।

"जी लवनिका जी हलुआ बहुत अच्छा बनाती हैं पिछली बार दिल्ली गया था तो सोहन हलवा खाकर आया था उनके हाथों का बना हुआ। सुना है पापड़ की होलसेल सप्लाई करती हैं कोई सेल्फ हेल्प ग्रुप बनाकर। ये भी सुना है बड़ी अच्छी बिक्री है पापड़ों की "

मैंने उनकी बात को आगे बढ़ाते हुए कहा।

"लेकिन अब उनकी कविता की बिक्री का समय है। उनकी किताब हमने प्रकाशित की है और तुम्हें हर प्लेटफार्म पर उसकी जोरदार मार्केटिंग करनी है "

उन्होंने रौबदार स्वर में कहा।

"जी वो मेरी किताब की पांडुलिपि को दिए दो वर्ष हो गए ,पैसे भी दे चुका हूं। आपने तभी कहा था कि दो -चार महीने में किताब प्रकाशित कर देंगे"

मैंने डरते -डरते कहा।

उन्होंने मुझे डपटा-

" तुम्हारे सौ किताबों के चक्कर में हमारे 3000 किताबों के ऑर्डर हाथ से निकल जाएंगे। जानते हो लवनिका जी के पतिदेव अब फॉरेन डिपार्टमेंट पहुँचने वाले हैं। और अगले वर्ल्ड हिंदी सम्मेलन के आर्गेनाइजर बनने वाले हैं। हमें उनसे किताबों के बड़े आर्डर मिलने की उम्मीद है।सो हम उनको ओब्लाइज करने के लिये ही ये काव्य संकलन निकाल रहे हैं ,इसीलिये हम इस पर इतनी मेहनत कर रहे हैं।हमने और भी लोगों को काम पर लगा रखा है।कुछ तो कविताएं भी लिख"

ये कहते हुए वो अचानक चुप हो गए मानों कोई गलत बात मुंह से निकल गयी हो।

थोड़ी देर तक दोनों तरफ से चुप्पी रही।

मैंने अनुमान लगाकर और दिल कड़ा करके पूछा -

"तो क्या कविताएं खुद लवनिका जी ने नहीं लिखी हैं। कविताएं भी क्या उन्हीं कवियों ने लिखी हैं जिनकी पांडुलिपियां आपके पास पेंडिंग हैं"।

"सब कविताएं उन कवियों ने ही नहीं लिखी हैं। बल्कि अपने संकलन की ज्यादातर कविताएं लवनिका जी ने ही लिखी हैं।लेकिन किताब का साइज पूरा नहीं हो पा रहा था सो कुछ कवियों की मदद लेनी पड़ी। किताब छप जाएगी तो लवनिका जी लेखिका की कटेगरी में आ जाएंगी। अब कवि की पत्नी को तो सरकारी खर्च पर हिंदी सम्मेलन में जाने का किराया और होटल वगैरह का खर्चा मिल नहीं सकता ,लेकिन अगर कवियत्री की लिस्ट में उनका नाम आ गया तो फॉरेन ट्रिप पक्की उनकी"

उन्होंने मुझे गूढ़ ज्ञान की बात समझायी।

"जी जैसा आप कहें लेकिन मुझे आप इस सबसे दूर ही रखें मैं कवि की पत्नी को कवियत्री कैसे लिख सकता हूँ?

मेरी भी तो छवि का नुकसान होगा"

मैंने मन कड़ा करते हुए कहा।

"नुकसान की भरपाई हो जाएगी। चिंता मत करो। लवनिका जी की कविताएं लिखने वालों और उनकी बेहतरीन समीक्षा और मार्केटिंग करने वालों को नाम कविवर करुण क्रंदन जी ने अनुवादकों के पैनल में डालने का वादा किया है"

उन्होंने मुझे समझाया।

"जी ये तो अनुचित है ,साहित्य में शुचिता " मेरी बात पूरी भी नहीं हो पाई कि बागड़

माहेश्वरी जी ने मुझे डांटते हुए कहा -

“धंधे में सब जायज है और कोई मेरे धंधे से खिलवाड़ करे उस पर उंगली उठाये मुझे इससे ज्यादा नाजायज बात कोई नहीं लगती। आपको लिखना है तो लिखें वरना बहुत हैं हमारे पास लिखने वाले। वैसे भी इस वर्ष हमें कितनी किताबें निकालनी हैं ,हमने लिस्ट और टारगेट फाइनल कर लिया है। अब आप तय करो कि आपको क्या करना है ,हमारे हिसाब से चलना है या ,,,,,, ” ये कहते हुए उन्होंने अपने शब्दों को रोक लिया।

मैं जान गया कि उनके अनकहे शब्दों की धमकी का क्या मलतब था। उनकी वार्षिक प्रकाशन लिस्ट और टारगेट का क्या मतलब था ?

दो -तीन वर्षों की मिन्नत -खुशामद और चमचागीरी के बाद टलते -टलते अब जाकर मेरी किताब इस वर्ष उनके प्रकाशन से प्रकाशित होने की उम्मीद बंधी थी और अब उनकी बात ना मानने का मतलब था कि इस वर्ष की उनकी प्रकाशन की लिस्ट से मेरी किताब हट जाएगी।

इस वर्ष की प्रकाशन लिस्ट से किताब के हटने का आशय था आगामी वर्षों तक किताब के प्रकाशन का टलना और अनंत काल तक टलते जाना और फिर उनके वादे का कालातीत हो जाना और फ़िर वही पुराना ढर्रा ना किताब लौटाना और ना ही पांडुलिपि।

मरता क्या ना करता ,हिंदी का लेखक विकल्प विहीन होता है ,सो मैंने भी अपने अंधकारमय भविष्य को और भी अंधकार में जाने से बचाने के लिये हामी भरने का निर्णय किया और बागड़ माहेश्वरी साहब को मस्का लगाते हुए कहा –

“अरे साहब, आप तो तुरन्त हाइपर हो जाते हैं। अरे हम सब दोस्त हैं अगर हम सब एक करेगा को प्रोमोट नहीं करेंगे तो कौन करेगा ? आप भी दोस्त हैं और करुण क्रंदन साहब भी मेरे दोस्त हैं , लवनिका चंचला जी भी मेरी भाभी हैं उनके हाथ के बनाये हुए हलुओं का स्वाद कई बार लिया है। लोग नमक का हक अदा करते हैं और हम मीठे का हक अदा कर देंगे” ये कहकर अंदर से रोते हुए भी बाहर से मैं जोरदार खोखली हँसी हँसा।

मेरे मन का रुदन मेरी खोखली हँसी के तले दब गया। मेरी नकली खिलखिलाहट पर वो आश्वस्त हुए फिर बोले –

“हाँ आपकी किताब दिखवाता हूं मैं, शायद प्रेस में चली गयी होगी अगर नहीं गयी होगी ,तो भिजवाता हूँ जल्द से जल्द “।

ये बात सुनते ही मैं पुलक उठा और हुलसते हुए पूछा –

करुण क्रंदन जी की बीवी ,यानी लवनिका चंचला जी के काव्य संग्रह पर कैसे -कैसे लिखना है और कहाँ -कहाँ भेजना है बताइये। मैं तुरन्त जुट जाता हूँ लिखने ,भेजने, पोस्ट करने और शेयर करने के लिये “।

“वो सब आपको तय करने की जरूरत नहीं और लिखना भी नहीं है हमने अपने ऑफिस के लोगों से समीक्षा लिखवा ली है। थोड़ी देर में हमारा एक असिस्टेंट आपको समीक्षा और उन सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मस की सूची सौंप देगा कि कहाँ -कहाँ पर ये समीक्षा भेजनी और पोस्ट करनी है। भेजने के बाद हमको बता देना हम उन समीक्षाओं को प्रकाशित करवा देंगे। याद रहे कि आपको लवनिका चंचला की समीक्षा में कोई फेरबदल नहीं करनी है सिर्फ ईमेल भेजते वक्त नीचे अपना नाम -पता और फोटो डाल देनी है ,समझे ना “

ये बात उन्होंने आदेशात्मक स्वर में मुझसे कही।

“जी समझ गया “

मैंने भी आदेश लेते हुए कहा।

“वेरी गुड, आल द बेस्ट अभी मेल मिल जाएगी आपको “

ये कहकर उन्होंने फोन काट दिया।

मैं सोचने लगा कि लवनिका चंचला की किताब की समीक्षा प्रकाशित होने के बाद मैं किस -किस को मेल या टैग करूंगा ?

मैंने मोबाइल रख दिया और हाथ में अपनी एक पसंदीदा किताब को लेकर निहारने लगा। नेपथ्य में कहीं एक गीत बज रहा था –

“क्या से क्या हो गया बेवफा तेरे प्यार में “।

चमचा पुराण

चमचें सदैव राखिये, बिन चमचे सब सून
चमचों में है गुण सभी, मिले उससे सुकून

जहाँ-जहाँ भी जाइये, पायेंगे जी आप
चमचा आज बना हुआ, दो मुँह वाला साँप

हाथ जोड़कर आपसे, खड़ा रहे वो दूर
तब माने रमेश उसे, आप चमचे हुजूर

एक नहीं होती उसकी, कई किस्मे हजार
हर कला में निपुण है, चमचा मेरा यार

बिन चमचे होते नहीं, कोई सा भी काम
चल रहा है अब इससे, कारोबार तमाम

मक्खन बाजी में लगे, चमचे तो दिन रात
इसी कला में ये सभी, खाते कभी न मात

नेता जाए जहाँ-जहाँ, वहाँ-वहाँ पर जाए
फिर वो उसकी प्रशस्ति में, गुण उनके ही गाए

करें आप रमेश यहाँ, चमचों के गुणगान
काम करेंगा आपका, एक दिन वो श्रीमान

चमचा हो ऐसा यहाँ, सबकुछ चट कर जाए
खुरचन जो भी हो बची, वह भी ना रह पाए

चमचा होता है वहीं, रमेश उसका खास
सदा उसके अधीन हो, उसका ही वो बाँस

जाते जहाँ भी चमचे, उससे हाथ मिलाए
फिर उससे ही वो सदा, आका के गुण गाये

पालोंगे चमचे अगर, होगा ना नुकसान
आपके गुणों का सदा, करेंगे वे बखान

चमचों से बढ़ती सदा, आप सभी की शान
उसमें ऐसी है छिपी, खूबी जो श्रीमान

चमचों पर लगा कितना, चाहे खूब लगाम
रमेश रहोंगे फिर भी, आप सभी नाकाम

रमेश मनोहरा

लोकचेतना में स्वाधीनता की लय

आकांक्षा यादव

स्वतंत्रता और स्वाधीनता प्राणिमात्र का जन्मसिद्ध अधिकार है। इसी से आत्मसम्मान और आत्मउत्कर्ष का मार्ग प्रशस्त होता है। भारतीय राष्ट्रीयता को दीर्घावधि विदेशी शासन और सत्ता की कुटिल-उपनिवेशवादी नीतियों के चलते परतंत्रता का दंश झेलने को मजबूर होना पडा था और जब इस क्रूरतम कृत्यों से भरी अपमानजनक स्थिति की चरम सीमा हो गई तब जनमानस उद्वेलित हो उठा था। अपनी राजनैतिक-सामाजिक-सांस्कृतिक-आर्थिक पराधीनता से मुक्ति के लिए सन् 1857 से सन् 1947 तक दीर्घावधि क्रान्ति यज्ञ की बलिवेदी पर अनेक राष्ट्रभक्तों ने तन-मन जीवन अर्पित कर दिया था। यह क्रान्ति करवटें लेती हुयी लोकचेतना की उत्ताल तरंगों से आप्लावित है। यह आजादी हमें यूँ ही नहीं प्राप्त हुई वरन् इसके पीछे शहादत का इतिहास है। लाल-बाल-पाल ने इस संग्राम को एक पहचान दी तो महात्मा गाँधी ने इसे अपूर्व विस्तार दिया। एक तरफ सत्याग्रह की लाठी और दूसरी तरफ भगतसिंह व आजाद जैसे क्रान्तिकारियों द्वारा पराधीनता के खिलाफ दिया गया इन्कलाब का अमोघ अस्त्र अँग्रेजों की हिंसा पर भारी पड़ा और अन्ततः 15 अगस्त 1947 के सूर्योदय ने अपनी कोमल रश्मियों से एक नये स्वाधीन भारत का स्वागत किया।

इतिहास अपनी गाथा खुद कहता है। सिर्फ पन्नों पर ही नहीं बल्कि लोकमानस के कंठ में, गीतों और किंवदंतियों इत्यादि के माध्यम से यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रवाहित होता रहता है। वैसे भी इतिहास की वही लिपिबद्धता सार्थक और शाश्वत होती है जो बीते हुये कल को उपलब्ध साक्ष्यों और प्रमाणों के आधार पर यथावत प्रस्तुत करती है। जरूरत है कि इतिहास की उन गाथाओं को भी समेटा जाय जो मौखिक रूप में जन-जीवन में विद्यमान है, तभी ऐतिहासिक घटनाओं का सार्थक विश्लेषण हो सकेगा। लोकलय की आत्मा में मस्ती और उत्साह की सुगन्ध है तो पीड़ा का स्वाभाविक शब्द स्वर भी। कहा जाता है कि

पूरे देश में एक ही दिन 31 मई 1857 को क्रान्ति आरम्भ करने का निश्चय किया गया था, पर 29 मार्च 1857 को बैरकपुर छावनी के सिपाही मंगल पाण्डे की शहादत से उठी ज्वाला वक़्त का इन्तज़ार नहीं कर सकी और प्रथम स्वाधीनता संग्राम का आगाज़ हो गया। मंगल पाण्डे के बलिदान की दास्तां को लोक चेतना में यूँ व्यक्त किया गया है-

''जब सत्तावनि के रारि भइलि/ बीरन के बीर पुकार भइल/बलिया का मंगल पाण्डे के/ बलिवेदी से ललकार भइल/मंगल मस्ती में चूर चलल/ पहिला बागी मसहूर चलल/गोरनि का पलटनि का आगे/ बलिया के बाँका सूर चलल।''

कहा जाता है कि 1857 की क्रान्ति की जनता को भावी सूचना देने हेतु और उनमें सोयी चेतना को जगाने हेतु 'कमल' और 'चपाती' जैसे लोकजीवन के प्रतीकों को संदेशवाहक बनाकर देश के एक कोने से दूसरे कोने तक भेजा गया। यह कालिदास के मेघदूत की तरह अतिरंजना नहीं अपितु एक सच्चाई थी। क्रान्ति का प्रतीक रहे 'कमल' और 'चपाती' का भी अपना रोचक इतिहास है। किंवदन्तियों के अनुसार एक बार नाना साहब पेशवा की भेंट पंजाब के सूफी फकीर दस्सा बाबा से हुई। दस्सा बाबा ने तीन शर्तों के आधार पर सहयोग की बात कही- सब जगह क्रान्ति एक साथ हो, क्रान्ति रात में आरम्भ हो और अँग्रेजों की महिलाओं व बच्चों का कत्लेआम न किया जाय। नाना साहब की हामी पर अलौकिक शक्तियों वाले दस्सा बाबा ने उन्हें अभिमंत्रित कमल के बीज दिये तथा कहा कि इनका चूरा मिली आटे की चपातियाँ जहाँ-जहाँ वितरित की जायेंगी, वह क्षेत्र विजित हो जायेगा। फिर क्या था, गाँव-गाँव तक क्रान्ति का संदेश फैलाने के लिए चपातियाँ भेजी गईं। कमल को तो भारतीय परम्परा में शुभ माना जाता है पर चपातियों को भेजा जाना सदैव से अँग्रेज अफसरों के लिए रहस्य बना रहा। वैसे भी चपातियों का सम्बन्ध मानव के भरण-पोषण से है। विचारक वी. डी. सावरकर ने एक जगह लिखा है- **"हिन्दुस्तान में जब भी क्रान्ति का मंगल कार्य हुआ, तब ही क्रान्ति-दूतों चपातियों द्वारा देश के एक छोर से दूसरे छोर तक इस पावन संदेश को पहुँचाने के लिये इसी प्रकार का अभियान चलाया गया था क्योंकि वेल्लोर के विद्रोह**

के समय में भी ऐसी ही चपातियों ने सक्रिय योगदान दिया था।" चपाती (रोटी) की महत्ता मौलवी इस्माईल मेरठी की इन पंक्तियों में देखी जा सकती है-

''मिले खुश्क रोटी जो आजाद रहकर/
तो वह खौफो जिल्लत के हलवे से बेहतर/
जो टूटी हुई झोंपड़ी वे जरर हो/
भली उस महल से जहाँ कुछ खतर हो।''

1857 की क्रान्ति वास्तव में जनमानस की क्रान्ति थी, तभी तो इसकी अनुगूँज लोक साहित्य में भी सुनायी पड़ती है। भारतीय स्वाधीनता का संग्राम सिर्फ व्यक्तियों द्वारा नहीं लड़ा गया बल्कि कवियों और लोक गायकों ने भी लोगों को प्रेरित करने में प्रमुख भूमिका निभायी। लोगों को इस संग्राम में शामिल होने हेतु प्रकट भाव को लोकगीतों में इस प्रकार व्यक्त किया गया-

''गाँव-गाँव में डुग्गी बाजल, बाबू के फिरल दुहाई/लोहा चबवाई के नेवता बा, सब जन आपन दल बदल/बा जन गंवकई के नेवता, चूड़ी फोरवाई के नेवता/सिंदूर पोंछवाई के नेवता बा, रांड कहवार के नेवता।'' राजस्थान के राष्ट्रवादी कवि शंकरदान सामोर ने मुखरता के साथ अँग्रेजों की गुलामी की बेड़ियाँ तोड़ देने का आह्वान किया- **''आयौ औसर आज, प्रजा परव पूरण पालण/आयौ औसर आज, गरब गोरां रौ गालण/आयौ औसर आज, रीत रारवण हिंदवाणी/आयौ औसर आज,विकट रण खाग बजाणी/फाल हिरण चुक्या फटक, पाछो फाल न पावसी/आजाद हिन्द करवा अवर, औसर इस्यौ न आवसी।''** 1857 की लड़ाई आर-पार की लड़ाई थी। हर कोई चाहता था कि वह इस संग्राम में अँग्रेजों के विरुद्ध जमकर लड़े। यहाँ तक कि ऐसे नौजवानों को जो घर में बैठे थे, महिलाओं ने लोकगीत के माध्यम से व्यंग्य कसते हुए प्रेरित किया-

''लागे सरम लाज घर में बैठ जाहु/मरद से बनिके लुगइया आए हरि/ पहिरि के साड़ी, चूड़ी, मुंहवा छिपाई लेहु/ राखि लेई तोहरी पगरइया आए हरि।''

1857 की जनक्रान्ति' का गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' ने भी बड़ा जीवन्त वर्णन किया है। उनकी कविता पढ़कर मानो 1857, चित्रपट की भाँति आँखों के सामने छा जाता है- **''सम्राट बहादुरशाह 'जफर', फिर आशाओं के केन्द्र बने/सेनानी निकले गाँव -गाँव, सरदार अनेक नरेन्द्र बने/लोहा इस भाँति लिया सबने, रंग फीका हुआ फिरंगी का/हिन्दू-मुस्लिम हो गये एक,रह गया न नाम दुरंगी का/अपमानित सैनिक मेरठ के, फिर स्वाभिमान से भड़क उठे/घनघोर बादलों-से गरजे, बिजली बन-बनकर कड़क उठे/हर तरफ क्रान्ति ज्वाला दहकी, हर ओर शोर था जोरों का/पुतला बचने पाये न कहीं पर, भारत में अब गोरों का।''**

1857 की क्रान्ति की गूँज दिल्ली से दूर पूर्वी उत्तर प्रदेश के इलाकों में भी सुनायी दी थी। वैसे भी उस समय तक अँग्रेजी फौज में ज्यादातर सैनिक इन्हीं क्षेत्रों के थे। स्वतंत्रता की गाथाओं में इतिहास प्रसिद्ध चौरीचौरा की

डुमरी रियासत बंधू सिंह का नाम आता है, जो कि 1857 की क्रान्ति के दौरान अँग्रेजों का सर कलम करके और चौरीचौरा के समीप स्थित कुसुमी के जंगल में अवस्थित माँ तरकुलहा देवी के स्थान पर इसे चढ़ा देते। कहा जाता है कि एक गद्दार के चलते अँग्रेजों की गिरफ्त में आये बंधू सिंह को जब फाँसी दी जा रही थी, तो सात बार फाँसी का फन्दा ही टूटता रहा। यही नहीं जब फाँसी के फन्दे से उन्होंने दम तोड़ दिया तो उस पेड़ से रक्तस्राव होने लगा जहाँ बैठकर वे देवी से अँग्रेजों के खिलाफ लड़ने की शक्ति माँगते थे। पूर्वांचल के अंचलों में अभी भी यह पंक्तियाँ सुनायी जाती हैं- ''**सात बार टूटल जब, फांसी के रसरिया/गोरवन के अकिल गईल चकराय/असमय पड़ल माई गाढ़े में परनवा/अपने ही गोदिया में माई लेतु तू सुलाय/बंद भईल बोली रुकि गइली संसिया/नीर गोदी में बहाते, लेके बेटा के लशिया।**''

भारत को कभी सोने की चिड़िया कहा जाता था। पर अँग्रेजी राज ने हमारी सभ्यता व संस्कृति पर घोर प्रहार किये और यहाँ की अर्थव्यवस्था को भी दयनीय अवस्था में पहुँचा दिया। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने इस दुर्दशा का मार्मिक वर्णन किया है- ''**रोअहु सब मिलिकै आवहु भारत भाई/हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई/सबके पहिले जेहि ईश्वर धन बल दीनो/सबके पहले जेहि सभ्य विधाता कीनो/सबके पहिले जो रूप -रंग रस-भीनो/सबके पहिले विद्याफल जिन गहि लीनो/अब सबके पीछे सोई परत लखाई/हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई।**''

आजादी की सौगात भीख में नहीं मिलती बल्कि उसे छीनना पड़ता है। इसके लिये ज़रूरी है कि समाज में कुछ नायक आगे आयें और षेश समाज उनका अनुसरण करे। ऐसे नायकों की चर्चा गाँव-गाँव की चौपालों पर देखी जा सकती थी। गुरिल्ला शैली के कारण फिरंगियों में दहशत और आतंक का पर्याय बन क्रान्ति की ज्वाला भड़काने वाले तात्या टोपे से अँग्रेजी रूह भी काँपती थी फिर उनका गुणगान क्यों न हो। राजस्थानी कवि शंकरदान सामौर तात्या की महिमा 'हिन्द नायक' के रूप में गाते हैं- ''**जठै गयौ जंग जीतियो, खटकै बिण रण खेत/तकड़ौ लडियाँ तांतियो, हिन्द थान रै हेत/मचायो हिन्द में आखी,तहल कौ तांतियो मोटो/धोम जेम घुमायो लंक में हणूं घोर/रचाओ ऊजली राजपूती रो आखरी रंग/जंग में दिखायो सूवायो अथग जोर।**'' इसी प्रकार शंकरपुर के राना बेनीमाधव सिंह की वीरता को भी लोकगीतों में चित्रित किया गया है- ''**राजा बहादुर सिपाही अवध में/धूम मचाई मोरे राम रे/लिख लिख चिठिया लाट ने भेजा/आब मिलो राना भाई रे/जंगी खिलत लंदन से मंगा दूं/ अवध में सूबा बनाई रे।**''

1857 की क्रान्ति में जिस मनोयोग से पुरुष नायकों ने भाग लिया, महिलायें भी उनसे पीछे न रहीं। लखनऊ में बेगम हज़रत महल तो झाँसी में रानी लक्ष्मीबाई ने इस क्रान्ति की अगुवाई की। बेगम हज़रत महल ने लखनऊ की हार के बाद अवध के ग्रामीण क्षेत्रों में जाकर क्रान्ति की चिन्गारी फैलाने का कार्य किया- ''**मजा हज़रत ने नहीं पाई/ केसर बाग लगाई/कलकत्ते से चला फिरंगी/ तंबू कनात लगाई/पार उतरि लखनऊ का/ आयो डेरा दिहिस लगाई/ आसपास लखनऊ का घेरा/सड़कन तोप धराई।**'' रानी लक्ष्मीबाई ने अपनी वीरता से अँग्रेजों के दाँत खट्टे कर दिये। उनकी मौत पर जनरल ह्यूगरोज ने कहा था कि- ''यहाँ वह औरत सोयी हुयी है, जो ब्रिदोही में एकमात्र मर्द थी।'' 'झाँसी की रानी' नामक अपनी कविता में सुभद्राकुमारी चौहान 1857 की उनकी वीरता का बखान करती हैं- ''**चमक उठी सन् सत्तावन में/वह तलवार पुरानी थी/बुन्देले हरबोलों के मुँह/हमने सुनी कहानी थी/खूब लडी मर्दानी वह तो/ झाँसी वाली रानी थी/खूब लड़ी मरदानी/ अरे झाँसी वारी रानी/पुरजन पुरजन तोपें**

लगा दई/ गोला चलाए असमानी/अरे झाँसी वारी रानी/ खूब लड़ी मरदानी/सबरे सिपाइन को पैरा जलेबी/ अपन चलाई गुरधानी।''

1857 की क्रान्ति में शाहाबाद के 80 वर्षीय कुँअर सिंह को दानापुर के विद्रोही सैनिकों द्वारा 27 जुलाई को आरा शहर पर कब्जा करने के बाद नेतृत्व की बागडोर सौपी गयी। बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश के तमाम अंचलों में शेर बाबु कुँअर सिंह ने घूम-घूम कर 1857 की क्रान्ति की अलख जगायी। आज भी इस क्षेत्र में कुँअर सिंह को लेकर तमाम किंवदन्तियाँ मौजूद है। इस क्षेत्र के अधिकतर लोकगीतों में जनाकांक्षाओं को असली रूप देने का श्रेय बाबु कुँअर सिंह को दिया गया है- ''**बक्सर से जो चले कुँअर सिंह पटना आकर टीक/पटना के मजिस्टर बोले रो कुँअर को ठीक/अतुना बात जब सुने कुँअर सिंह दी बंगला फुंकवाई/गली-गली मजिस्टर रोए लाट गये घबराई।**''

1857 की क्रान्ति के दौरान ज्यों-ज्यों लोगो को अँग्रेजों की पराजय का समाचार मिलता वे खुशी से झूम उठते। अजेय समझे जाने वाले अँग्रेजों का यह हश्र, उस क्रान्ति के साक्षी कवि सखवत राय ने यूँ पेश किया है- ''**गिद्ध मेडराई स्वान स्यार आनंद छाये/ कहिं गिरे गोरा कहीं हाथी बिना सूंड के।**'' 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम ने अँग्रेजी हुकूमत को हिलाकर रख दिया। बौखलाकर अँग्रेजी हुकूमत ने लोगों को फाँसी दी, पेड़ों पर समूहों में लटका कर मृत्यु दण्ड दिया और तोपों से बाँधकर दागा- ''**झूलि गइलें अमिली के डरियाँ/बजरिया गोपीगंज कई रहलि।**'' वहीं जिन जीवित लोगों से अँग्रेजी हुकूमत को ज्यादा खतरा महसूस हुआ, उन्हें कालापानी की सजा दे दी। तभी तो अपने पति को कालापानी भेजे जाने पर एक महिला 'कजरी' के बोलो में कहती है- ''**अरे रामा नागर नैया जाला काले पनियां रे हरी/ सबकर नैया जाला कासी हो बिसेसर रामा/नागर नैया जाला काले पनियां रे हरी/घरवा में रोवै नागर, माई और बहिनियां रामा/से जिया पैरोवे बारी धनिया रे हरी।**''

बंगाल विभाजन के दौरान स्वदेशी-बहिष्कार- प्रतिरोध का नारा खूब चला। अँग्रेजी कपड़ों की होली जलाना और उनका बहिष्कार करना देश भक्ति का शगल बन गया था, फिर चाहे अँग्रेजी कपड़ों में ब्याह रचाने आये बाराती ही हों- ''**फिर जाहु-फिरि जाहु घर का समधिया हो/मोर धिया रहिहैं कुंआरि/ बसन उतारि सब फेंकहु विदेशिया हो/ मोर पूत रहिहैं उघार/ बसन सुदेसिया मंगाई पहिरबा हो/ तब होइहै धिया के बियाह।**''

जलियाँवाला बाग हत्याकाण्ड अँग्रेजी हुकूमत की बर्बरता व नृशंसता का नमूना था। इस हत्याकाण्ड ने भारतीयों विशेषकर नौजवानों की आत्मा को हिलाकर रख दिया। गुलामी का इससे वीभत्स रूप हो भी नहीं सकता। सुभद्राकुमारी चौहान ने 'जलियावाले बाग में वसंत' नामक कविता के माध्यम से श्रद्धांजलि अर्पित की है- ''**कोमल बालक मरे यहाँ गोली खा-खाकर/कलियाँ उनके लिए गिराना थोड़ी लाकर/आशाओं से भरे हृदय भी छिन्न हुए हैं/अपने प्रिय-परिवार देश से भिन्न हुए हैं/कुछ कलियाँ अधखिली यहाँ इसलिए चढ़ाना/करके उनकी याद अश्रु की ओस बहाना/तड़प-तड़पकर वृद्ध मरे हैं गोली खाकर/शुष्क पुष्प कुछ वहाँ गिरा देना तुम जाकर/यह सब करना, किन्तु बहुत धीरे-से आना/यह है शोक-स्थान, यहाँ मत शोर मचाना।**''

कोई भी क्रान्ति बिना खून के पूरी नहीं होती, चाहे कितने ही बड़े दावे किये जायें। भारतीय स्वाधीनता संग्राम में एक ऐसा भी दौर आया जब कुछ नौजवानों ने अँग्रेजी हुकूमत की चूल हिला दी, नतीजन अँग्रेजी सरकार उन्हें जेल में डालने के लिये तड़प उठी। 11 अगस्त 1908 को जब 15 वर्षीय क्रान्तिकारी खुदीराम बोस को अँग्रेज सरकार ने निर्ममता से फाँसी पर लटका दिया तो मशहूर उपन्यासकार प्रेमचन्द के अन्दर का देश प्रेम भी हिलोरें मारने लगा और वे खुदीराम बोस की एक तस्वीर बाजार से खरीदकर अपने घर लाये तथा कमरे की दीवार पर टाँग दिया। खुदीराम बोस को फाँसी दिये जाने से एक वर्ष पूर्व ही उन्होंने 'दुनिया का सबसे अनमोल रतन' नामक अपनी प्रथम कहानी लिखी थी, जिसके अनुसार- 'खून की वह आखिरी बूँद जो देश की आजादी के लिये गिरे, वही दुनिया का सबसे अनमोल रतन है।' उस समय अँग्रेजी सैनिकों की पदचाप सुनते ही बहनें चौकन्नी हो जाती थीं। तभी तो सुभद्राकुमारी चौहान ने 'बिदा' में लिखा कि- ''**गिरफ्तार होने वाले हैं/आता है वारंट अभी/धक-सा हुआ हृदय, मैं सहमी/हुए विकल आशंक सभी/मैं पुलकित हो उठी! यहाँ भी/आज गिरफ्तारी होगी/फिर जी धड़का, क्या भैया की / सचमुच तैयारी होगी।**'' आजादी के दीवाने सभी थे। हर पत्नी की दिली तमन्ना होती थी कि उसका भी पति इस दीवानगी में शामिल हो। तभी तो पत्नी पति के लिए गाती है- ''**जागा बलम गाँधी टोपी वाले आई गइलैं..../राजगुरू सुखदेव भगत सिंह हो/ तहरे जगावे बदे फाँसी पर चढ़ाय गइलै।**''

सरदार भगत सिंह क्रान्तिकारी आन्दोलन के अगुवा थे, जिन्होंने हँसते-हँसते फासी के फन्दों को चूम लिया था। एक लोकगायक भगत सिंह के इस तरह जाने को बर्दाश्त नहीं कर पाता और गाता है- ''**एक-एक क्षण बिलम्ब का मुझे यातना दे रहा है – तुम्हारा फंदा मेरे गरदन में छोटा क्यों पड़ रहा है/मैं एक नायक की तरह सीधा स्वर्ग में जाऊँगा/अपनी-अपनी फरियाद धर्मराज को सुनाऊँगा/मैं उनसे अपना वीर भगत सिंह माँग लाऊँगा।**'' इसी प्रकार चन्द्रशेखर आजाद की शहादत पर उन्हें याद करते हुए एक अंगिका लोकगीत में कहा गया- ''**हौ आजाद त्वौं अपनौ प्राणे कऽ /आहुति दै के मातृभूमि कै आजाद करैलहों/तोरो कुर्बानी हम्मै जिनगी भर नैऽ भुलैबे/देश तोरो रिनी रहेते।**'' सुभाष चन्द्र बोस ने नारा दिया कि- ''तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा,फिर क्या था पुरूषों के साथ-साथ महिलाएँ भी उनकी फौज में शामिल होने के लिए बेकरार हो उठ- ''**हरे रामा सुभाष चन्द्र ने फौज सजायी रे हारी/कड़ा-छड़ा पैंजनिया छोड़बै, छोड़बै हाथ कंगनवा रामा/ हरे रामा, हाथ में झण्डा लै के जुलूस निकलबैं रे हारी।**''

महात्मा गाँधी आजादी के दौर के सबसे बड़े नेता थे। चरखा कातने द्वारा उन्हने स्वावलम्बन और स्वदेशी का रूझान जगाया। नौजवान अपनी-अपनी धुन में गाँधी जी को प्रेरणास्त्रोत मानते और एक स्वर में गाते- ''**अपने हाथे चरखा चलउबै/हमार कोऊ का करिहैं/गाँधी बाबा से लगन लगउबै/ हमार कोई का करिहैं।**'' 1942 में जब गाँधी जी ने 'अँग्रेजों भारत छोड़ो' का आह्वान किया तो ऐसा लगा कि 1857 की क्रान्ति फिर से जिन्दा हो गयी हो। क्या बूढ़े, क्या नवयुवक, क्या पुरुष, क्या महिला, क्या किसान, क्या जवान..... सभी एक स्वर में गाँधी जी के पीछे हो लिये। ऐसा लगा कि अब तो अँग्रेजों को भारत छोड़कर जाना ही होगा। गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' ने इस ज्वार को महसूस किया और इस जन क्रान्ति को शब्दों से यूँ सँवारा- ''**बीसवीं सदी के आते ही, फिर उमड़ा जोश जवानों में/हड़कम्प मच गया नए सिरे से, फिर शोषक शैतानों में/सौ बरस भी नहीं बीते थे सन् बयालीस पावन आया/लोगों ने समझा नया जन्म लेकर सन् सत्तावन आया/आजादी की मच गई धूम फिर शोर हुआ आजादी का/फिर जाग उठा यह सुप्त देश चालीस कोटि आबादी का।**''

भारत माता की गुलामी की बेड़ियाँ काटने में असंख्य लोग शहीद हो गये, बस इस आस के साथ कि आने वाली पीढ़ियाँ स्वाधीनता की बेला में साँस ले सकें। इन शहीदों की तो अब बस यादें बची हैं और इनके चलते पीढ़ियाँ मुक्त जीवन के सपने देख रही हैं। कविवर जगदम्बा प्रसाद मिश्र 'हितैषी' इन कुर्बानियों को व्यर्थ नहीं जाने देते- ''**शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले/वतन पर मरने वालों का यही बाकी निशां होगा/कभी वह दिन भी आएगा जब अपना राज देखेंगे/जब अपनी ही जमीं होगी और अपना आसमाँ होगा।**''

देश आजाद हुआ। 15 अगस्त 1947के सूर्योदय की बेला में विजय का आभास हो रहा था। फिर कवि लोकमन को कैसे समझाता। आखिर उसके मन की तरंगें भी तो लोक से ही संचालित होती हैं। कवि सुमित्रानन्दन पंत इस सुखद अनुभूति को यूँ सँजोते हैं- ''**चिर प्रणम्य यह पुण्य अहन्, जय गाओ सुरगण/आज अवतरित हुई चेतना भू पर नूतन/नव भारत,फिर चीर युगों का तमस आवरण/तरुण-अरुण-सा उदित हुआ परिदीप्त कर भुवन/सभ्य हुआ अब विश्व, सभ्य धरणी का जीवन/ज खुले भारत के संग भू के जड़ बंधन/शांत हुआ अब युग-युग का भौतिक संघर्षण/ मुक्त चेतना भारत की यह करती घोषण!**''

देश आजाद हो गया, पर अँग्रेज इस देश की सामाजिक-सांस्कृतिक-आर्थिक व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर गये। एक तरफ आजादी की उमंग, दूसरी तरफ गुलामी की छायाओं का डर..... गिरिजाकुमार माथुर 'पन्द्रह अगस्त' की बेला पर उल्लास भी व्यक्त करते हैं और सचेत भी करते हैं- ''**आज जीत की रात, पहरुए, सावधान रहना/ खुले देश के द्वार, अचल दीपक समान रहना/ऊँची हुई मशाल हमारी, आगे कठिन डगर है/शत्रु हट गया, लेकिन उसकी छायाओं का डर है/शोषण से मृत है समाज,कमजोर हमारा घर है/किन्तु आ रही नई जिंदगी,यह विश्वास अमर है।**'' कवि रसूल मियाँ 'पन्द्रह अगस्त' की बेला पर उल्लास भी व्यक्त करते हैं और सचेत भी करते हैं –''**पंद्रह अगस्त सन् सैंतालिस के सुराज मिल/बड़ा कठिन से ताज मिल/सुन ला हिन्दू-मुसलमान भाई/अपना देशवा के कर ला भलाई/तोहरे हथवा में हिन्द माता के लाज मिल/बड़ा कठिन से ताज मिलल।**'' आजादी भले ही मिल गई पर देश में सांप्रदायिकता व नफरत के बीज भी बो गई। 'बांटो और राज करो' की तर्ज पर अंग्रेजों ने जाते-जाते देश के दो टुकड़े कर दिए। आजादी के जश्न से परे महात्मा गांधी निकल पड़े ऐसे ही दंगाइयों को समझाने पर उनकी नियति में कुछ और ही लिखा था। अंततः 30 जनवरी 1948 को गाँधी जी की गोली मारकर हत्या कर दी गई। फिर भला लोक-कवि का आहत मन भला कैसे शांत रहता- ''**के मारल हमरा गाँधी के गोली हो/ धमाधम तीन गो/कल्हीए आजादी मिल/ आज चलल गोली/गाँधी बाबा मारल गइले/देहली के गली हो/धमाधम तीन गो/ पूजा में जात रहले बिरला भवन में/ दुशमनवा बइठल रहल पाप लिए मन में/ गोलिया चला के बनल बली हो/धमाधम तीन गो (कवि रसूल मियाँ)।**''

आजादी की कहानी सिर्फ एक गाथा भर नहीं है बल्कि एक दास्तान है कि क्यों हम बेड़ियों में जकड़े, किस प्रकार की यातनायें हमने सहीं और शहीदों की किन कुर्बानियों के साथ हम आजाद हुये। यह ऐतिहासिक घटनाक्रम की मात्र एक शोभा यात्रा नहीं अपितु भारतीय स्वाभिमान का संघर्ष, राजनैतिक दमन व आर्थिक शोषण के विरुद्ध लोक चेतना का प्रबुद्ध अभियान एवं सांस्कृतिक नवोन्मेष की दास्तान है। आजादी का अर्थ सिर्फ राजनैतिक आजादी नहीं अपितु यह एक विस्तृत अवधारणा है, जिसमें व्यक्ति से लेकर राष्ट्र का हित व उसकी परम्परायें छुपी हुई हैं। जरूरत है हम अपनी कमजोरियों का विश्लेषण करें, तदनुसार उनसे लड़ने की चुनौतियाँ स्वीकारें और नए परिवेश में नए जोश के साथ आजादी के नये अर्थों के साथ एक सुखी व समृद्ध भारत का निर्माण करें।

पोस्टमास्टर जनरल आवास, नदेसर, कैण्ट प्रधान डाकघर, वाराणसी-221002

गंध गुणों की बिखरायें

हे जगत- नियंता यह वर दो ,
फूलों से कोमल मन पायें ।
परहित हो ध्येय सदा अपना,
पल पल इस जग को महकायें ॥

हम देवालय में वास करें ,
या शिखरों के ऊपर झूलें ,
लेकिन जो शोषित वंचित हैं ,
उनको भी कभी नहीं भूलें ,
हम प्यार लुटायें जीवन भर ,
सबका ही जीवन सरसायें ।
परहित हो ध्येय सदा अपना,
पल पल इस जग को महकायें ॥

हम शीत , धूप, बरसातों में ,
कांटों में कभी न घबरायें ,
अधरों पर मधु मुस्कान रहे
चाहे कैसे भी दिन आयें ,
सबको अपनापन बॉट बाँट ,
हम गंध गुणों की बिखरायें ।
परहित हो ध्येय सदा अपना,
पल पल इस जग को महकायें ॥

जीवन छोटा हो या कि बड़ा ,
उसका कुछ अर्थ नहीं होता ,
जो औरों को खुशियाँ बाँटे ,
वह जीवन व्यर्थ नहीं होता ,
व्यवहार हमारा याद रहे ,
हम भी कुछ ऐसा कर जायें ।
परहित हो ध्येय सदा अपना ,
पल पल इस जग को महकायें ॥

त्रिलोक सिंह ठकुरेला

लघुकथा : अनिल श्रीवास्तव

आफिस से थका- मांदा घर लौटते ही रवि अधलेटी अवस्था में सोफे पर ही लुढ़क गया। थोड़ी देर बाद हिम्मत करके उठा, हाथ-मुँह धोकर सोचा खाने के लिये कुछ बना लूँ। फिर सोचा थोड़ी देर आराम कर लूँ फिर बना लूँगा खाना। आज थकान ज्यादा ही लग रही है। यह सोचकर बिस्तर पर लेटा ही था कि कब आँख लग गयी, पता ही नहीं चला।

अचानक आँख खुली तो उसे पहले तो विश्वास ही नहीं हुआ कि रात के दो बज रहे हैं। कुछ पल कमरे की दीवारों को देखने के बाद उसे याद आया आज तो उसने खाना ही नहीं खाया। किचन में कुछ ऐसी चीजें तलाश कीं जो बिना पकाये तुरन्त खाकर भूख मिटाई जा सके। लेकिन कुछ नहीं समझ आया। फिर गुड़ खाकर और घड़े का ठंडा पानी पीकर वापस बिस्तर पर लेट गया। निद्रा देवी ने जल्द ही उसे अपने आगोश में ले लिया।

मोबाइल की घंटी सुनकर जब उसकी नींद टूटी तो सुबह के 6 बज रहे थे।

माँ का फोन .. इतनी सुबह... वो तो शाम को करती हैं ....।

"प्रणाम माँ.. "

"कल रात तुमने खाना नहीं खाया क्या ?"

"ख.... खा... खाया न माँ । "

"माँ हूँ तुम्हारी ! तुम्हें तो ठीक से झूठ बोलना भी नहीं आता। कल मैंने स्वप्न देखा कि तुम भूखे हो।"

रवि से कुछ कहते न बना। आँखों से टपककर गाल पर लुढ़क गयीं ... कुछ

बूँदे .. बस ... ।

लघुकथा - डा शील कौशिक

आरक्षित स्लीपर क्लास के डिब्बे में एक अधेड़ आदमी दो बच्चों के साथ चढ़ा। उसने इधर-उधर सीट के लिए झांका। कहीं भी सीट न मिलने पर वे दरवाजे के पास बैठ गए। बच्चे टिक कर कहां बैठने वाले थे। थोड़ी देर में वे डिब्बे में उछल- कूद करने लगे। एक यात्री ने बर्थ पर जगह बनाते हुए उन्हें चुपचाप बैठने के लिए कहा। वे धीरे-धीरे बातें करने लगे। एक कहने लगा-' हम नानी के यहां जाकर मौज- मस्ती करेंगे। पिछली गर्मियों की छुट्टियों में वहां राजू और हिना के साथ खेल कर खूब मज़ा आया था।'

सोने की तैयारी कर रहे यात्रियों को इन बच्चों के जोर- जोर से बात करने व हंसने से कोफ़्त हो रही थी। तुम्हें नींद नहीं आ रही क्या?

आखिर एक बुज़ुर्ग ने उसके पिता से कहा, "संभालो अपने बच्चों को! ये डिब्बे में उधम मचा रहे हैं।"

उसे चुप बैठा देखकर, बुज़ुर्ग ने फिर कहा,

" अबे ओ! बहरा है क्या?"

" थोड़ी देर हंस- खेल लेने दो बाबू जी! बच्चों को तो पता ही नहीं कि इनकी मां आज दिल्ली के चांद बाग में हुए दंगे में मारी गई है। सूचना मिलते ही मैं इन्हें इनकी मां के अंतिम दर्शन कराने ले जा रहा हूं।

दो दिन पहले ही वह अपनी बीमार मां को देखने मायके गई थी। " उसकी आवाज जैसे किसी गहरे कुएं से आ रही थी।

सबको एक साथ सांप सूंघ गया हो जैसे। उनके मन में इन मासूम बच्चों के प्रति सहानुभूति उमड़ आई। यात्रियों की नींद गायब थी और डिब्बे में चांद बाग के

भयानक दंगों की चर्चा गूंज रही थी।

हिंदू संस्कृति का अपमान क्यों?

हमारे देश में धर्म के नाम पर अशांति फैलाने का घृणित कार्य किया जाना कोई नई बात नहीं। अभी नूपुर शर्मा को लेकर देश में विवाद शांत भी हुआ कि अब एक डाक्यूमेंट्री फिल्ममेकर लीना मणिमेकलाई ने एक नया बखेड़ा खड़ा कर दिया। लेकिन अफ़सोस की उन्हें ऐसा करने में कुछ गलत नहीं लगा। उन्होंने हिंदू आस्था की देवी माँ काली का सिगरेट पीते पोस्टर दिखाया। यह गलती से किया गया काम नहीं था। बल्कि जानबूझकर इस तरह से लोकप्रियता हासिल करने की पूरी स्क्रिप्ट लिखी गई। हिन्दू धर्म के खिलाफ दुष्प्रचार करना कोई बड़ी बात नहीं है। सदियों से हिंदू धर्म का मजाक बनाया जाता रहा है। शायद लीना ने भी यही सोचकर विवादित पोस्ट के जरिए लोकप्रियता हासिल करने की कोशिश की है। उन्होंने माँ काली के पोस्टर में एक हाथ में सिगरेट और दूसरे हाथ में एलजीबीटीक्यू (LGBTQ) का झंडा लिए स्त्री के मॉर्डन स्वरूप भर को तो नहीं दिखाया होगा, क्योंकि उसके पहले भी उनके मन में भगवान राम को लेकर जहर दिखा था। तमिलनाडु के मदुरै में जन्मी लीना मणिमेकलाई कनाडा की टोरंटो में बेस्ट फिल्ममेकर है। लीना ने 2002 में अपने करियर की शुरुआत की। यह पहली बार नहीं है जब वह विवादों में घिरी है। इससे पहले भी उनकी फिल्में 'सेंगडल', 'पराई', 'व्हाइट वैन स्टोरी' भी विवादित रही है।

ऐसे में बात सीधी सी है कि अपनी फिल्म को प्रचारित करना है तो हिन्दू देवी-देवताओं का मजाक बनाओ। हिन्दू तो वैसे भी माफी की प्रतिमूर्ति है। वे कौन सा गला काटने के लिए आगे आने वाले है! कौन उनके खिलाफ कोई फतवा जारी होगा! न ही इसके विरोध में कोई आंदोलन खड़ा होगा। अगर कोई ऐसा करने का विचार करेगा तो मीडिया में हिन्दू को कट्टरवादी दिखाकर शांत कराने वाले ठेकेदारों की भी हमारे देश में कमी नहीं है। इसी का फायदा तो लीना मणिमेकलाई जैसे लोग उठाते हैं। इतना ही नहीं आजकल देश में यूं भी सस्ती लोकप्रियता पाने का नया ट्रेंड चलन में आ गया है। फिर चाहे वह कोई फिल्मकार, चित्रकार या कोई सेकुलर हो। सभी हिन्दू देवी देवताओं का मज़ाक उड़ाते है। अब मुन्नवर फारुखी को ही ले लो। कुछ समय पहले तक मुन्नवर फारुखी का कोई नाम तक नहीं जानता था। लेकिन अगले ही पल में मुन्नवर फारुखी मशहूर हो गए। शायद उसने भी मशहूर होने के लिए चित्रकार एम एफ हुसैन की तरह देवी देवताओं के अपमान का रास्ता चुनना ज्यादा उचित समझा।

हमारे देश की विडंबना देखिए यहां अभिव्यक्ति की आजादी भी धर्म विशेष के लिए अलग-अलग परिभाषित की जाती है।

बात अगर फ़िल्म की ही करें तो फ़िल्म समाज का आईना है। लेकिन वर्तमान दौर में न केवल फिल्मों का स्वरूप बदला है बल्कि फिल्मों के माध्यम से देश में एक नई क्रांति शुरू हो गयी है। बेशक वर्तमान युग सूचना क्रांति का युग है। सूचना और संचार ने हमारे जीवन को रफ्तार दी है, लेकिन अगर सूचना ही ग़लत परोसी जाएं या ग़लत ढंग से रचकर तथ्यों को सूचना और संवाद के रूप में परोसा जाएं।

जब 2015 में फ्रांस में पैग़म्बर मोहम्मद का कार्टून एक समाचार पत्र ने प्रसारित किया गया तो उस समाचार पत्र में काम करने वाले 12 लोगो की हत्या कर दी गई थी। वहीं साल 2020 में फ्रांस के टीचर का गला रेत दिया गया क्योंकि उसने पैगम्बर मोहम्मद का कार्टून बच्चो को दिखाया था। लेकिन जब हमारे देश मे एम एफ हुसैन ने हिन्दू देवी-देवताओं का नग्न चित्र बनाया तो उनका समर्थन करने वालों की लंबी फ़ौज खड़ी हो गई। ये अलग बात है कि इस बखेड़े के बाद हुसैन साहब ने भारत छोड़ दिया था। बात अगर फिल्मों की करें तो फिल्म पीके में भी ईश्वर के नाम पर नौटंकी दिखाई गयी लेकिन इसका कहीं कोई विरोध नहीं हुआ। जबकि यही बातें किसी और धर्म के लिए होती तो हाहाकार मच गया होता। नूपुर शर्मा विवाद का ही जिक्र करें तो एक तरफ एक धर्म विशेष की धार्मिक किताब के पन्ने पर लिखी बात का जिक्र करने भर से विदेशों तक से विरोध के स्वर उठ खड़े हुए यहां तक कि नूपुर शर्मा का समर्थन करने वाले लोगों तक की जान ले ली गई और दुनिया मूकदर्शक बनकर तमाशा देखती रही। एक धर्म की आस्था का समर्थन और दूसरे धर्म का विरोध करना कहां तक सही कहा जा सकता है? ऐसे में यह अपने-आपमें बड़ा सवाल बन जाता है।

बात अगर फ़िल्म की ही करें तो फ़िल्म समाज का आईना है। लेकिन वर्तमान दौर में न केवल फिल्मों का स्वरूप बदला है बल्कि फिल्मों के माध्यम से देश में एक नई क्रांति शुरू हो गयी है। बेशक वर्तमान युग सूचना क्रांति का युग है। सूचना और संचार ने हमारे जीवन को रफ्तार दी है, लेकिन अगर सूचना ही ग़लत परोसी जाएं या ग़लत ढंग से रचकर तथ्यों को सूचना और संवाद के रूप में परोसा जाएं। फ़िर यह सिर्फ़ व्यक्ति-विशेष को ही नहीं प्रभावित करेगी बल्कि पूरे समाज में ही वैमनस्यता फैलाने का काम करेगी और हालिया दौर में यही देखा जा रहा है।

वर्तमान दौर में वेब सीरीज और शॉर्ट फिल्म का चलन बढ़ता जा रहा है और इन फिल्मों पर नजर डाले तो यह केवल एक धर्म विशेष के खिलाफ ही एजेंडे के तहत विवादित कंटेंट प्रसारित करते हैं। वजह शायद यही है कि हिंदुओं को टारगेट करने की ओछी राजनीति बरसों से ही हमारे देश में चली आ रही है। हमारी संस्कृति हमारी आस्था को पश्चिमी संस्कृति ने हमेशा से ही नीचा दिखाने का प्रयास किया है। हिंदू धर्म की व्याख्या को भी सभी धर्मावलंबियों ने अपने- अपने स्वार्थ के अनुसार परिभाषित करने का प्रयास किया है। यही वजह है कि सैकडों साल पहले जब मुगल भारत आए तो उन्होंने हमारी आस्था पर ही चोट करने का काम किया। हमारे मंदिरों को तोड़ दिया। यहां तक कि मूर्ति पूजा की भी निंदा की गई। वहीं जब अंग्रेज भारत आए तो उन्होंने भी हिंदू धर्म को नीचा दिखाने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी और एकेश्वरवाद की परिभाषा गढ़ दी।

सोनम लववंशी

आलोक शर्मा

फणीश्वरनाथ रेणु:एक संस्मरण

उन दिनों मेरे घर के हॉल में, प्रायः महीने दो महीने के अंतराल से संध्या समय, साहित्यिक गोष्ठियोंका आयोजन हुआ करता था, समय समय पर इनमें भाग लेने वाले साहित्यकार थे सर्व श्री रामधारी सिंह दिनकर, नन्ददुलारे बाजपेयी, नागार्जुन, फणीश्वरनाथ रेणु, विष्णुकांत शास्त्री, मोहन राकेश, राजेंद्र यादव, मन्नू भंडारी, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, छविनाथ मिश्र, डाः प्रतिभा अग्रवाल, डाः कृष्ण बिहारी मिश्र, चन्द्रदेव सिंह, शंकर महेश्वरी, नवल, सिद्धेश, चन्द्रमौलि उपाध्याय, कपिल मृत्युंजय उपाध्याय (हिंदीसे) विमल मित्र, बनफूल, तुषार राय (बंगलासे) कृष्ण चंदर, शमशुद जमां, मुजफ्फर इमाम (उर्दूसे) इन गोष्ठियों की रपोर्ताज, चन्द्रमौलि उपाध्याय के द्वारा चित्रोंके साथ, समय समय पर धर्मयुग में प्रकाशित होती रहीं थीं।

उन्हीं गोष्ठियों के बीच, एक दिन हमें पता चला कि रेणु जी कलकत्ता आये हुये हैं, चूंकि उसी दिन संध्या समय गोष्ठी का आयोजन था इसलिए हम सब मित्र चाहते थे कि वे भी इसमें सहभागिता करें परन्तु वे कहां ठहरे हुये हैं इस बात से हम सर्वथा अनिभिज्ञ थे। तभी हमें किसी ने बतलाया कि उनकी जीवन संगिनी, रंगकर्मियों की सामग्री बेचने वाली प्रख्यात दुकान जी.सी. लाहा से जुड़ी हुई हैं परंन्तु जब हम उनके यहां पहुंचे तो न जाने क्यूं बहुत ही बड़ी नानुकुर के बाद उन्होंने हमें बतलाया कि वे उनकी बगान बाड़ी में ठहरे हुए हैं, मैने और नवल जी ने उनसे पता लिया और उनसे मिलने निकलपड़े। फिर जब हम पता तलाशते, बगीचे के उस पार एक महल-नुमा मकान के मुख्य द्वार पर पहुंचे तो देखा, वहां एक चटाई पर रेणु जी, सीधे लेटे जैसे प्रगाढ़ निद्रा में विलीन हैं, घुंघराले केश बिखरे हुये हैं, हलके श्याम वर्ण के मुख पर तेज झलक-रहा है, उनके एकतरफ रिवाल्वर तथ चश्मा पड़ा है तथा दूसरी तरफ एक खाली बोतल पड़ी है तभी उन्होंने करवट बदली, क्रांतिकारी लेखक की श्वाननिद्रा, किसी का आभास पाकर तुरंत खुल गई- "तनिक दारू पीलिये थे सो सुत गये थे, आप लोग" -हमने अपना परिचय देने के बाद जब उन सेगोष्ठी में शामिल होने का निमंत्रण दिया तो उन्होंने बहुत ही सहज रूप से, तुरंत स्वीकार कर लिया। मुंह हाथ धोकर, धोती कुर्ता पहरने के बाद रिवाल्वर को अपनी कमर में खोंसा और हमारे साथ निकल पड़े।

एक लम्बा रास्ता तय करके जब हम गन्तव्य पर पहुंचे, तब तक सांझ उतर आई थी। अभी हम गाड़ीसे उतरकर घरके दरवाज़े तकभी नहीं पहुंचे थे कि रेणु जी सड़ककी ओर वापस चलदिये। हमदोनोंभी उनके पीछे सड़ककी तरफ

चलदिये, तभी हमने देखा वे एक सिरपर डलिया रखकर माल ढोनवाले मजदूरको पुकार रहे थे-"अरे ऐ रामलखनवा कहां जारहा है,सब कुसल है तो"-मजदूरने झुककर उनके पैर छूये और वे उससे बातें करनेलगे। हम उनके उस सरल व्यवहारको देखकर नतमस्तक होगये हिंदीका वह महान लेखक जिसने "मैला आंचल" तथा "परती परिकथा" जैसे महान उपन्यास लिखेहों जो अभी अभी, उस "तीसरी कसम" चलचित्र की कथा तथा पटकथा लिखकर लौटा हो, जिसके नायक नयीका, राज कपूर और वहीदा रहमान हों, जिसका निर्देशन श्री बासू भट्टाचार्य जैसे निर्देशक ने किया हो, वह एक साधारण मजदूर से सड़क पर बातें कर रहा हो हम समझ गये कि ऐसा लेखक ही वैसे महान ग्रंथों की रचना कर सकता है।

कुछ समय बाद जब हम रेणु जी के साथ हॉल में पहुंचे तब तक, वहां अनेक साहित्यकार आ चुके थे, रेणुजी के द्वारा आसन ग्रहण करनेके बाद मेरी आठ वर्षीय बेटी रेणु से कहा गया कि वह रेणु जी को माला पहिराए, रेणु जी इस

बात से प्रसन्न हो गये कि बिटिया का नाम भी रेणु है, माला पहरने के बाद, उन्होंने उसे प्रेम से गले लगाया तथा सुभाशीष दिया। उपस्थित युवा कवियों के कुछ समय तक काव्यपाठ के पश्चात, जब समस्त साहित्यकारों ने उनसे अनुरोध किया कि वे बम्बई स्थित सिने जगत के,अपने कुछ अनुभव सुनायें तो वे मुसकराते हुए कहने लगे -"मत पूछिये, वहां का हाल जब मैं "तीसरी कसम" चलचित्र पर काम कर रहा था तो बम्बई के एक चलचित्र निर्माता ने, मुझे उनके दफ्तर आने केलिये एक निमंत्रण भेजा। एकदिन समय निकालकर जब मैं उनके दफ्तर पहुंचा तो चाय पानी के साथ मेरा सत्कार करने के बाद, उन्होंने मुझ से आग्रह किया कि मैं उनके चलचित्र के लिये एक कहानी लिखदूं, मेरे द्वारा यह पूछे जाने पर कि वे कैसी कहानी चाहते हैं, इस पर वे बहुत ही व्यपारिक रूपमें बोल उठे"।

"देखिये रेणु जी हम लोग जिन चलचित्रों को बनाते हैं वह चार भागों में बंटा रहता है, चार आना गाना, चार आना, नाच चार आना करतब (स्टंट) और चार आना कहानी'- "उनकी बात सुनकर, अपनी हंसी रोकते हुए मैं पूछ उठा, फिर भी कुछ तो आइडिया दीजिए "- इस पर वे बोल उठे-" जैसे एक खुली कार चलाता हुआ हीरो, जी.टी. रोड से जा रहा है, हटात् उसकी कार खराब होजाती है, अब आगे की कहानी आप जोड़िये"- "मजा लेते हुए मैने कहा - " वह कार से उतरकर चारों तरफ देखता है,तभी उसकी निगाह सिर पर बोझ ढोती कुछ लडकियों पर पड़ती है, वह उनसे सहायता मांगता है लडकियां उसे बताती हैं, इधर तो कोई मिस्त्री नहीँ मिलेगा हां यदि वे चाहें तो पास खड़ी बैलगाड़ी वाले से कहकर वे उसकी गाड़ी पास के अपने गांव रखवा सकती हैं, हीरो के राजी होते ही वे सब, बैलगाड़ी वाले को पास बुलाती हैं तथा बैलगाड़ी में पड़ी रस्सी से उसकी गाड़ी को बांधने की चेष्टा करती हैं...अभी मैं अपनी बात पूरी भी नहीं कर पाया था कि अचानक वे बोल उठे-" यह क्या कर दिया रेणु जी आपने रस्सी क्यों हीरोइन का दुपट्टा कब काम आयेगा, उसी से गाड़ी बंधवाईये, पबलिक खुश हो जायेगी "-"मेरे लिये अपनी हंसी रोक पाना कठिन हो रहा था इसलिये यह कहकर कि मैं इस कहानीपर कुछ करता हूं, अपने प्राण छुड़ाकर वहां से चलदिया "- रेणु जी की इस सिने जगत की बातको सुन कर गोष्टी में उपस्थि समस्त साहित्यकार खिलखिलाते हंस पड़े और इसी के साथ गोष्टी समाप्त होगई। रेणु जी को विदा कराते हुए मैंने उन्हें भेंट स्वरूप अपना स्वटंकित काव्य संकलन सविनय भेंट किया, लगभग एक माह बाद मुझे उनका पत्र मिला गोष्ठी केलिए आभार जताते हुए उन्हों ने मेरी कविता पर लिखा था "इतनी भारी काया पर इतनी सूक्ष्म संवेदना" उनका शुभाशीष पाकर मेरे जैसा अकिंचन कवि धन्य हो गया।

असम की बाढ़ : कारण और निवारण के बीच फंसे लोग

अरुण तिवारी

असम में बाढ़ कोई नई घटना नहीं है . किन्तु मानसून के पहले ही चरण में बाढ़ का इतना ज्यादा टिक जाना और इसके लिए सरकार के मुखिया द्वारा लोगों पर दोषारोपण असम के लिए नई घटना है।

गौर फरमाइए कि असम के मुख्यमंत्री ने सिल्चर नगर की बाढ़ के लिए बराक नदी के तटबंध के क्षतिग्रस्त हो जाने को जिम्मेदार ठहराया है। किन्तु किसी एक तटबंध के क्षतिग्रस्त हो जाने के लिए कुछ लोगों को दोषी ठहराकर श्रीमान हिमंत बिस्वा अपनी सरकारी जवाबदेही से बच नहीं सकते। रिपोतार्ज कह रहे हैं कि अब तक एक नहीं, 297 तटबंध क्षतिग्रस्त हो चुके हैं। सैंड्रप नामक प्रख्यात अध्ययन केंद्र के मुताबिक, रखरखाव और सतत निगरानी के अभाव में ऐसा हुआ है। क्या मुख्यमंत्री महोदय इसके लिए भी लोगों को जिम्मेदार ठहराकर अपना पल्ला झाड़ लेंगे ?

यह एक पहलू है।

दूसरा पहलू यह है कि तटबंध यहाँ न दरकते तो क्या नदी उफनती ही न ? क्या नदी यूं ही सहज बह जाती ? विशेषज्ञ कहते हैं कि जंगलों के कटान, मलबे की डंपिंग तथा नदी व अन्य जल ढांचों की जमीन पर बढ़े कब्जे ने बाढ़ के रूप को विकराल किया है। बांधों के निर्माण और प्रबंधन को लेकर सवाल हैं ही। जाहिर है कि नदी यहां न उफनती, तो कहीं और कहर ढहाती. यदि तटबंध नदी के बाढ़ क्षेत्र (फ्लड प्लेन एरिया) के भीतर बनेंगे तो एक न एक दिन दरकेंगे ही।

क्या नदी के वेग को आवेग में बदलने में तटबंधों की कोई भूमिका नहीं ?

तटबंधों के बीच नदी और उसके किनारे बसी बसावटों के फंसने के कष्ट को कोसी नदी के बाशिंदों से ज्यादा कौन जानता है ? बावजूद इसके यदि यमुना नदी की भूमि पर अक्षरधाम, खेलगांव, मेट्रो स्टेशन की सुरक्षा के लिए नया तटबंध बनाते वक़्त जब राजधानी ने ही इस तथ्य की अनदेखी की है; गोमती, साबरमती समेत रिवर फ्रंट डेवलपमेंट की सारी परियोजनएं यही कर रही है तो लोगों को दोष क्यों ?

मेरी राय है किसी भी राज्य में आने वाली बाढ़ों की विकरालता में अब ब्रह्मपुत्र एक्सप्रेस -वे जैसे उन सभी महामार्गों की भूमिका की भी निष्पक्ष जांच की जानी चाहिए, जो नदी किनारे अक्खड़ तटबंधों की तरह खड़े हैं। इस बारे में इंजीनियरों, मुख्यमंत्रियों और भारत सरकार के सड़क मंत्रियों का आंखें मूंद लेना, तारीफ के काबिल कतई नहीं।

जरुरत किस भी बाढ़ के कारण और निवारण पर विस्तार से चर्चा करने की है। किन्तु चर्चा के शुरू में यह सवाल पूछ लेना जरुरी है कि **क्या बाढ़ सचमुच इतनी बुरी घटना है कि हम इससे बचने के उपाय तलाशें ?**

जवाब यह है कि है कि बाढ़ हमेशा बुरी नहीं होती; बुरी होती है एक सीमा से अधिक उसकी तीव्रता तथा उसका जरूरत से ज्यादा दिनों तक टिक जाना। मिट्टी, पानी और खेती के लिहाज से बाढ़ वरदान होती है। प्राकृतिक बाढ़ अपने साथ उपजाऊ मिट्टी, मछलियां और अगली फसल में अधिक उत्पादन लाती है। यह

बाढ़ ही होती है कि जो नदी और उसके बाढ़ क्षेत्र के जल व मिट्टी का शोधन करती है। बाढ़ ही भूजल भण्डारों को उपयोगी जल से भर देती है। इस नाते बाढ़, जलचक्र के संतुलन की एक प्राकृतिक और जरूरी प्रक्रिया है। इसे आना ही चाहिए। बाढ़ के कारण ही आज गंगा का उपजाऊ मैदान है। बंगाल का माछ-भात है। बिहार के कितने इलाकों में बिना सिंचाई के खेती है। जाहिर है कि हमें बाढ़ नहीं, बाढ़ के वेग और टिकने के दिनों के कारणों की तलाश करनी चाहिए। बारिश के दिनों में नगरों में जलभराव के कारण, तलाश का एक भिन्न विषय है।

गौरतलब तथ्य

इस दिशा में सबसे गौरतलब तथ्य यह है कि इस वर्ष जिन तारीखों में बाढ़ व नगरों में जलभराव के समाचार सबसे ज्यादा आये, उन तारीखों में लगभग सभी संबधित राज्यों के वर्षा औसत में बढ़ोत्तरी की बजाय, कमी के आंकड़े हैं। इससे स्पष्ट है कि बाढ़ का कारण वर्षा औसत की अधिकता तो कतई नहीं है।

साधारणतया बाढ़ में आई अप्रत्याशित तीव्रता के असल कारण पांच ही हैं: बादलों का फटना, नदियों में अधिक कटाव, अधिक गाद जमाव, नदी भूमि पर अतिक्रमण तथा बांध-बैराज व उनका कुप्रबंधन।

बाढ़ के अधिक टिक जाने के दो कारण है: मानव द्वारा नदियों को रास्ता बदलने को विवश करना तथा जलनिकासी मार्गों को अवरुद्ध किया जाना।

आइये समझें कि कैसे?

कायदा यह है कि बारिश से पहले हर बांध के जलाश्य को खाली कर दिया जाना चाहिए। बारिश के दौरान लगातार थोड़ा-थोड़ा पानी छोड़ते रहना चाहिए। वर्ष 2016 में गंगा में आई बाढ़ को याद कीजिए कि आखिरकार हुआ क्या था। जून तक मध्य प्रदेश के लोग जलापूर्ति ने होने से परेशान थे। जलाश्य खाली कर उन्हे पानी पहुंचाया जा सकता था। म. प्र. के बाणसागर बांध प्रबंधकों ने ऐसा नहीं किया। जलाश्य में 33.3 प्रतिशत से अधिक पानी को रोक कर रखा। 19 अगस्त की सुबह तक बाणसागर बांध में उसकी क्षमता का 96 प्रतिशत भरने की गलती की। फिर 19 अगस्त के दिन में दो घंटे में इतना पानी छोड़ दिया कि उसने उ.प्र.-बिहार तक को दुष्प्रभावित किया।

ऐसी गलतियों के उदाहरण कई हैं।

एक समय बनबासा बैराज से एक साथ पानी छोड़ने से उत्तराखण्ड में आई बाढ़ को भला हम कैसे भूल सकते हैं ? पूर्वी उत्तर प्रदेश में भी हथिनीकुण्ड बैराज, नरोरा बैराज, अैरल बांध, रिहंद बांध आदि से छोड़े गये पानी को मुख्य कारण के तौर पर चिन्हित किया गया है। यही स्थिति टोंक ज़िले में स्थित बीसलपुर बांध आदि से एक साथ छोड़े पानी के कारण राजस्थान जैसे कम पानी के इलाके भी देख चुके हैं।

बाढ़ के दुष्प्रभाव बढ़ाने में बांध-बैराजों की और क्या भूमिका है ?

इस दिशा में सबसे गौरतलब तथ्य यह है कि इस वर्ष जिन तारीखों में बाढ़ व नगरों में जलभराव के समाचार सबसे ज्यादा आये, उन तारीखों में लगभग सभी संबधित राज्यों के वर्षा औसत में बढ़ोत्तरी की बजाय, कमी के आंकड़े हैं। इससे स्पष्ट है कि बाढ़ का कारण वर्षा औसत की अधिकता तो कतई नहीं है।

होता यह है कि बांध-बैराजों से पानी धीरे-धीरे छोड़ने की स्थिति में पानी आगे बढ़ जाता है और उसमें मौजूद गाद नीचे बैठकर पीछे छूट जाती है। छूटी गाद, जगह-जगह एकत्र होकर नदी के बीच टापू का रूप ले लेती है। ये टापू, नदी का मार्ग बदलकर उसे विवश कर देते हैं कि पीछे से अधिक पानी आने पर वह नये क्षेत्र की यात्रा पर निकल जाये। हिमालयी नदियां अपने साथ ज्यादा गाद लेकर चलती हैं; लिहाजा, कुछ वर्ष पूर्व कोसी ने अपना रास्ता 200 किलोमीटर तक बदला। नया मार्ग इसके लिए तैयार नहीं होता। नया इलाका होने के कारण जलनिकासी में वक्त लगता है। जलनिकासी मार्गों में अवरोधों के कारण भी बाढ़ टिकाऊ हो जाती है। यही कारण है कि पहले तीन दिन टिकने वाली बाढ़, अब पूरे पखवाड़े कहर बरपाती है; संपत्ति विनाश के अलावा बीमारी का कारण बनती है। दूसरी तरफ बांध-बैराजों से एक साथ छोड़ा पानी नदी किनारों के कटान का कारण बनता है। अचानक और बिना सूचना छोड़े अधिक पानी के लिए लोग तैयार नहीं होते। वे अनायास बाढ़ का शिकार बन जाते हैं। मध्य प्रदेश के तवा बांध ने भी कुछ वर्ष पूर्व यही किया था।

यहां यह याद करना जरूरी है कि

कभी कोलकोता बंदरगाह को गाद भराव से बचाने के नाम पर फरक्का बांध और बाढ़ मुक्ति के नाम पर कोसी तटंबध का निर्माण किया गया था। आज ये दोनो ही निर्माण बाढ़ की तीव्रता बढ़ाने वाले साबित हो रहे हैं। जिस गाद को समुद्र के करीब पहुंचकर डेल्टा बनाने थे, बांध-बैराजों में फंसने के कारण वह डेल्टा क्षेत्र में कमी और उनके डूब का कारण बन रही है। इसीलिए कोसी के तटबंध में फंसे गांव आज भी दुआ करते हैं कि तटबंध टूटे और उन्हे राहत मिले।

इसीलिए बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार, कभी खुद फरक्का बांध को तोड़े जाने की मांग कर चुके हैं। इसीलिए नदी के निचले तट की ओर औद्योगिक कॉरीडोर, एक्सप्रेस-वे आदि निर्माण परियोजनाओं का विरोध किया जाता रहा है। इसीलिए अब बांध, बैराज और गाद को लेकर राष्ट्रीय नीति बनाने की मांग की जा रही है। इससे एक बात और स्पष्ट है कि बांध, बैराज, तटबंध और नहरों का निर्माण बाढ़ मुक्ति का उपाय नहीं है।

नदी को नहर या नाले का स्वरूप देने की गलती भी नहीं की जानी चाहिए। 'रिवर फ्रंट डेवल्पमेंट' के नाम पर कुछ दीवारें और चमकदार इमारतें खडी कर लेना, बाढ़ को विनाश के लिए खुद आमंत्रित करना है। बांध-बैराजों की उपस्थिति तथा नदी को उसके प्राकृतिक मार्ग से अलग कृत्रिम मार्ग पर ले जाने के कारण राष्ट्रीय नदी जोड़ परियोजना भी इसका उपाय नहीं है।

उपाय है यह है कि

बरसे पानी को नदी में आने से पहले ही

अधिक से अधिक संचित कर धरती के पेट में बिठा देना। मिट्टी कटान को नियंत्रित करना और जलनिकासी मार्गों को अवरोधमुक्त बनाये रखना अन्य जरूरी सावधानियां हैं। खाली भूमि, उबड़-खाबड़-ढालदार भूमि, जंगल, छोटी वनस्पतियां, खेतों की ऊंची मज़बूत मेड़बंदियां, तालाब-झील जैसे जल संचयन ढांचे यही काम करते हैं। बादल फटे या कम समय में ढेर सारा पानी बरस जाये, बाढ़ की तीव्रता कम करने की तकनीक भी यही है और सूखे से संकट से निजात पाने की तकनीक भी यही। हमें यह सदैव याद रखना होगा।

आइये, अब जरा नगरों के बाढ़ व जलजमाव की चपेट में आने के कारणों पर गौर करें।

इसका एक कारण यह है कि नगरों के जलनिकासी तंत्र पहले एक बार में अधिकतम 12 से 20 मिलीमीटर वर्षा के हिसाब से डिज़ाइन किए जाते रहे हैं; जबकि पिछले पांच दशक के दौरान मुंबई, चेन्नई, दिल्ली जैसे नगरों में एक बार में 125 मिलीमीटर से अधिक तक वर्षा दर्ज करने के मौके देखने को मिले। राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण स्वयं मानता है कि भारतीय नगरों की जलनिकासी क्षमता औसत वर्षा से बहुत अधिक कम है। देखरेख में कमी से यह क्षमता और कम हुई है। ठोस व पाॅली कचरे के निष्पादन तथा मलबे को डंप करने के अवैज्ञानिक चाल-चलन तथा नदियों-तालाबों-झीलों के बाढ़ क्षेत्र में अतिक्रमण के कारण भी भूमि के ऊपर व नीचे के जलनिकासी मार्ग अवरुद्ध हुए हैं। दूसरी तरफ हर इंच को पक्का करने की बढ़ती प्रवृति के कारण बरसे पानी को सोखने की नगरीय क्षमता घटी है।

मार्गदर्शी निर्देश हैं कि नगरों के निचले इलाकों को पार्कों, पार्किंग क्षेत्रों तथा अन्य खुले क्षेत्र के लिए आरक्षित किया जाना चाहिए। हमने इससे उलट श्रीनगर की डल व वूलर झील के बाढ़ क्षेत्र में काॅलोनियां बसा दी हैं। चेन्नई के 5000 हेक्टेयर से अधिक के मार्शलैंड को सिकोड़कर 500 हेक्टेयर में समेट दिया गया ? मुंबई के सिवरी के निकट स्थित दलदली क्षेत्र को ठोस कचरे से भर दिया गया।

गौर कीजिए कि जयपुर का अमानीशाह नाला, कभी एक नदी थी। हमने पहले उसका नाम बदला और फिर उसके भीतर तक पक्की बसावट होने दी है। जयपुर विकास प्राधिकरण ने खुद इस नदी भूमि में आवंटन किया। अलवर से निकलने वाली साबी नदी के साथ हरियाणा और दिल्ली ने यही किया।

गुडगाँव का संकट

गुडगांव की भू-आकार देखिए। गुड़गांव एक ऐसा कटोरा है, जिसकी जलनिकासी को सबसे ज्यादा साबी नदी का सहारा था। हरियाणा ने साबी का नाम बदलकर बादशाहपुर नाला और दिल्ली ने नजफगढ़ नाला लिखकर नदी को नदी रूप में बनाये रखने की जिम्मेदारी से पल्ला झाड़ लिया। तिस पर गलती यह कि बादशाहपुर नाले को कंक्रीट का बना दिया गया है। बसावट के कारण वह भी अतिक्रमण की चपेट में है। 1958 में नजफगढ़ झील की बाढ़ ने 145 वर्ग किलोमीटर का क्षेत्रफल घेरा था। अभी झील चार वर्ग किलोमीटर मे समेट दी गई है। नजफगढ़ झील से 100 साला बाढ़ के आधार पर गुड़गांव के नगर नियोजन विभाग ने सेक्टर 36बी, 101 आदि को बाढ़ के उच्चतम क्षेत्र में स्थित घोषित किया हुआ है। राज्य की पर्यावरण प्रभाव आकलन प्राधिकरण ने इन सेक्टरों में नींव का स्तर नजफगढ़ झील के उच्चतम बाढ़ स्तर से ऊंचा रखने की हिदायत दी थी। ऐसा नहीं हुआ। परिणाम यह है कि मात्र चार घंटे की बारिश में ही हम सभी ने गुड़गांव को जल भराव से त्राहि-त्राहि करते देखा है। हमें इन सभी गलतियों से सीखना और तद्नुसार नियोजन करना होगा।

बाढ़ नुकसान कम करे;

इसके लिए परपंरागत बाढ़ क्षेत्रों व हिमालय जैसे संवेदनशील होते नये इलाकों में समय से पूर्व सूचना का तकनीकी तंत्र विकसित करना जरूरी है। बाढ़ के परंपरागत क्षेत्रों में लोग जानते हैं कि बाढ़ कब आयेगी। वहां जरूरत बाढ़ आने से पहले सुरक्षा व सुविधा के लिए एहतियाती कदमों की हैं: पेयजल हेतु सुनिश्चित हैंडपम्पों को ऊंचा करना। जहां अत्यंत आवश्यक हो, पाइपलाइनों से साफ पानी की आपूर्ति करना। मकानों के निर्माण में आपदा निवारण मानकों की पालना। इसके लिए सरकार द्वारा जरूरतमंदों को जरूरी आर्थिक व तकनीकी मदद। मोबाइल बैंक, स्कूल, चिकित्सा सुविधा व अनुकूल खानपान सामग्री सुविधा। ऊंचा स्थान देखकर वहां हर साल के लिए अस्थाई रिहायशी व प्रशासनिक कैम्प सुविधा। मवेशियों के लिए चारे-पानी का इंतजाम। ऊंचे स्थानों पर चारागाह क्षेत्रों का विकास। देसी दवाइयों का ज्ञान। कैसी आपदा आने पर क्या करें ? इसके लिए संभावित सभी इलाकों में निःशुल्क प्रशिक्षण देकर आपदा प्रबंधकों और स्वयंसेवकों की कुशल टीमें बनाईं जायें व संसाधन दिए जायें। परंपरागत बाढ़ क्षेत्रों में बाढ़ अनुकूल फसलों का ज्ञान व उपजाने में सहयोग देना। बादल फटने की घटना वाले संभावित इलाकों में जल संरचना ढांचों को पूरी तरह पुख्ता बनाना। यही उपाय हैं।

असम भी एक ऐसा परम्परागत बाढ़ क्षेत्र है। क्या असम ने यह किया ?

साहस

लघुकथा

रामप्रसाद कुमावत

प्रो. मनिक को जब उनका जमीर कचोटने लगा और बेचैनी हद पार करने लगी तो उन्होंने नौकरी छोड़ने का फैसला करते हुए त्यागपत्र लिख मारा। एक साल से कॉलेज में प्रोफेसर के रूप में तैनात थे मगर उन्हें लगा कि उन्होंने इस दौरान ऐसा कोई काम नहीं किया जिसके लिये करीब डेढ़ लाख की रकम उन्हें हर माह दी जाए। उन्होंने त्यागपत्र के साथ अब तक मिले वेतन की रकम भरकर एक चैक भी नत्थी कर प्रिंसीपल को सौंपा।

त्यागपत्र और चैक थामे प्रिंसीपल भाटिया ने प्रो. मनिक को समझाने की कोशिश की-- 'पागल मत बनो! आजकल कहीं भी कॉलेज तो क्या यूनिवर्सिटी तक में पढ़ाई होती कहां हैं? यूं सभी सोचेंगे तो संस्थान ही बंद हो जायेंगे!

'नहीं सर, ऐसा नहीं होगा। प्रो. मनिक ने कहा- 'सब मेरी तरह की व्याकुलता में रातभर जागते व सोचते होंगे, ऐसा हरगिज नहीं लगता। आपके स्नेह, सहयोग और सद्भाव केलिये आभार...!" यह कहते हुए प्रो. मनिक प्रिंसीपल की अंधेरी सोच के कमरे से बाहर निकल गये।

कॉलेज में प्रो. मनिक के नौकरी छोड़ने तथा वेतन लौटाने की खबर ने जबर्दस्त विस्फोट कर दिया। सबसे ज्यादा शोर स्टाफ रूम से आ रहा था। एक ने कहा-'बड़ा आदर्शवादी बन रहा है तो दूसरे ने 'ड्रामेबाज, तीसरे ने 'पब्लिसिटी पाने का हथकंडा बता दिया तो कोई इस बहाने अपनी नौकरी को यह कहकर न्यायोचित ठहराता रहा कि 'युवा यदि क्लासरूम में नहीं आएं तो वे क्या करें? कोई शिक्षा व्यवस्था के गिरते हालात, बदलते नैतिक मूल्य और देश की राजनीति पर चिंतन के बहाने अपनी भडास उंडेलता रहा।

प्रो. मनिक केम्पस में अपने कमरे में लौटे और सामान बांधने में जुट गये। तभी पड़ौस में रह रहे प्रो. नलिन नीलमणी ने बिना दरवाजा खटखटाये भीतर प्रवेश किया और सीधे पूछ लिया-'अब क्या करने का इरादा है?

'अपने गाँव जाऊंगा नीलमणी सर! फिलहाल घर-परिवार के साथ कुछ दिन रहूंगा। प्रो. मनिक ने गहरी लम्बी सांस छोड़ते हुए कहा- 'यहां मन काफी भारी था, पर आज रिलेक्स फील कर रहा हूँ।

'सोच में हल्कापन नहीं हो तो ऐसे ठोस कदम उठाये जा सकते हैं प्रो. मनिक! प्रो. नीलमणी ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा-'मैं आपको फॉलो तो नहीं कर पाऊंगा लेकिन आपके इस जज्बे को सेल्यूट करता हूँ। ये साहस हर कोई नहीं कर सकता। काश, मैं भी यह साहस जुटा पाता। सोच के उजाले को बटोरते प्रो. नीलमणी ने शरीर ढीला छोड़ते हुए अपनी विवशता जताई।

बाहर टेक्सी वाले ने आने का हॉर्न बजाया तो प्रो. मनिक अपनी अटैची व बेडिंग टेक्सी में रखने लगे। प्रो. नीलमणी से हाथ मिलाकर अभिवादन किया और टेक्सी में बैठ गये। प्रो. नीलमणी अपनी बेचैनी पर पूरी तरह काबू पाने का साहस जुटा चुके थे। 'बेस्ट ऑफ लक प्रो. मनिक!

बुरे दिन आएंगे ??

बद्री प्रसाद वर्मा अनजान

कभी सोचा न था जिन्दगी में
बुरे दिन आएंगे।
किस्मत में ऐसे हम
ठोकरें बस खाएंगे।

आंखों में आंसू आ कर
हमको खूब रुलाएंगे।
फूल भी मेरे लिए
कांटा बन जाएंगे।

राह चलते हम
हर दुख को उठाएंगे।
जिन्दगी में वो हमें
दगा दे जाएंगे।

अपने ही हमें
देख कर बदल जाएंगे।
जिन्दगी में मेरे
दर्द भरे दिन आएंगे।

वक्त की नजाकत को
हम नहीं समझ पाएंगे।
अनजान इस तकदीर को
सारा इल्जाम लगाएंगे।

बद्री प्रसाद वर्मा अनजान